महाभोज

नाट्य-रूपान्तर

मन्नू भंडारी

राधाकृष्ण

1983
©
रचना यादव
नई दिल्ली

नाटक को मंचित करने से पहले निश्चित शुल्क देकर लेखिका की लिखित अनुमति प्राप्त करना आवश्यक है : पत्र-व्यवहार का पता : द्वारा अक्षर प्रकाशन प्रा० लिमिटेड, 2/36 अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

प्रथम संस्करण
1983

मूल्य
22 रुपये

आवरण
गोपी गजवानी

प्रकाशक
राधाकृष्ण प्रकाशन
2, अंसारी रोड, दरियागंज
नई दिल्ली-110002

मुद्रक
कमल प्रिंटर्स
9/5866, सुभाष मौहल्ला 2
गांधीनगर, दिल्ली-110031

ओंप्रकाशजी की स्मृति में

प्रथम प्रस्तुति

राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के रंग-मंडल द्वारा
(मार्च-अप्रैल, 1982)

निर्देशन : श्रीमती अमाल अलाना
मंच-सज्जा : श्री निसार अलाना

पात्र

दा साहब : मनोहर सिंह
सुकुल बाबू व बिसू (मृत) : अनिल कपूर
अप्पा साहब : हेमन्त मिश्र
पांडेजी : बागीश कुमार सिंह
लखन : प्रमोद माउथो
जमना बहन : सुरेखा सीकरी
सक्सेना, एस० पी० : अनंग देसाई
सिन्हा, डी० आई० जी० व फ़ोटोग्राफर : राजू बारोट
दत्ता बाबू : जी० पी० नामदेव
भवानी : प्रेम मटियानी
नरोत्तम व मोहनसिंह : रवि झाँकल
रत्ती : जी० एस० बेदी
महेश एवं सूत्रधार : विजय कश्यप
विन्दा : वसन्त जोसलकर
हीरा : रघुवीर यादव
थानेदार : युवराज शर्मा
जोरावर : राजेश विवेक
काशी : विनोद वर्मा
रुक्मा : उत्तरा बावरकर
लठैत : इक़बाल मेहदी

जोगेसर साहू : अमिताभ श्रीवास्तव
विसू की माँ व जोरावर की लड़की : नूतन सूर्य
श्रीमती सिन्हा : उपा बैनर्जी
डी० आई० जी० की पार्टी के मेहमान : विनोद वर्मा, निरुपमा वर्मा, रश्मि शर्मा, अनिल कपूर, अमिताभ श्रीवास्तव, रघुवीर यादव, जी० एस० बेदी, डॉली अहलूवालिया, आशा देवी।

गाँव वाले : रवि झाँकल, रमेश अथवाल, ओमप्रकाश, भरतसिंह, बासू पाटिल, मास्टर फ़िलिप, राधेश्याम, नूतन सूर्य, डॉली अहलूवालिया, उपा बैनर्जी, आशादेवी, निरुपमा, प्रेम मटियानी, तेजपाल, प्रमोद राज़दान, बच्चनसिंह, दिलबरसिंह, बालमसिंह, अयोध्याप्रसाद, शिवप्रसाद, यूसुफ खान, राजेन्द्रसिंह, मनोहर पितले।

मंच-पार्श्व

मच-व्यवस्था : जी० एस० मराठे
मच-सज्जा सहायक : युवराज शर्मा, इकबाल मेहदी
मंच-निर्माण : दिलीपचन्द
वस्त्र-सज्जा : अमाल अलाना
सहायक : डॉली अहलूवालिया, रवि झाँकल, रघुवीर यादव
मच-सामग्री : निसार अलाना
सहायक : उपा बैनर्जी, राजू बारोट, ओमप्रकाश, प्रमोद राज़दान, बासू पाटिल, नूतन सूर्य
प्रकाश-परिकल्पना : निसार अलाना, जी० एस० मराठे
सहायक : राधेश्याम, रमेश अथवाल
ध्वनि-संयोजन एव संचालन : प्रेम मटियानी, पी० डी० वॉल्सन, प्रमोद माउथो
फोटोग्राफ़र : टी० विश्वनाथ, एस० त्यागराजन
प्रचार : सुरेखा सीकरी, प्रेम मटियानी, अनंग देसाई
प्रस्तुति-सहायक : जी० पी० नामदेव

राष्ट्रीय नाट्य-मंडल के प्रमुख : मनोहर सिंह

मंच-प्रस्तुति से पहले

'महाभोज' पहले उपन्यास और फिर नाटक के रूप में लिखना मेरे लिए बिलकुल दो भिन्न रचनात्मक अनुभवों से गुजरना रहा है। स्वाभाविक भी है, क्योंकि हर विधा की अपनी अलग जरूरतें होती हैं, अलग शर्तें। उपन्यास लिखते समय उसकी स्थितियों, समस्याओं और पात्रों के साथ ही पाठक का अस्तित्व भी इस तरह घुल-मिल गया था कि अलग से कभी उसका बोध ही नहीं हुआ। लेकिन नाटक को तो दर्शक से ही आरम्भ करना पड़ा, और उसकी निरन्तर उपस्थिति लेखन को कहीं-न-कहीं नियन्त्रित और निर्धारित भी करती रही। उपन्यास के पूरे विस्तार को कसी हुई और प्रभावपूर्ण दृश्य-योजना में बदलना, अपने को अनुपस्थित करके केवल संवादों और क्रियाओं या मुद्राओं के माध्यम से सारे पात्रों और स्थितियों को उजागर करना, सारी प्रस्तुति को सीमित अवधि और रंग-स्थलों में केन्द्रित कर देना—ये और ऐसी ही जाने कितनी अपेक्षाएँ और सीमाएँ थीं जिनसे बँधकर मुझे अपनी बात कहनी थी, कथ्य के प्रभाव को पूरी तरह सुरक्षित रखते हुए। इस प्रकार नाटक की अपेक्षाओं और अपने मन्तव्य के बीच निरन्तर सन्तुलन-बिन्दु खोजते जाना मेरे उपन्यासकार के लिए निहायत ही नया अनुभव था। निश्चय ही इस प्रक्रिया ने मेरी समझ और दृष्टि को अधिक व्यापक और समृद्ध किया।

उपन्यास के रूप में 'महाभोज' न चरित्र-प्रधान उपन्यास है, न समस्या-प्रधान। वैसे कथानकों में आसानी यह होती है कि सारी चीज़ को समेटकर चरित्र या समस्या के आसपास केन्द्रित कर दिया जाता है। रचना तब चुस्त भी लगती है और नुकीली भी। 'महाभोज' आज के राजनैतिक माहौल को उजागर करने वाला स्थिति-प्रधान उपन्यास है। आज राजनीति को स्वप्नों, आदर्शों और मूल्यों वाला व्यक्ति नहीं चलाता, बल्कि राजनीति खुद अपने चरित्र गढ़ती चलती है—ऐसे चरित्र जो अपने भीतरी निर्णय, विवेक या साहस से नहीं चलते, वरन स्थितियों के दबाव से बनते-बिगड़ते हैं। उनका महत्व इसमें निर्जीव मोहरों से अधिक नहीं। हर प्यादे की लड़ाई फर्जी बनने की है और लड़ाई की इस बिसात ने समाज के हर वर्ग को धीरे-धीरे अपने चंगुल में कस लिया है। लेकिन मनुष्य क्या इतनी आसानी से अपने को स्थितियों के हवाले

कर देता है ? वह बिलकुल भी प्रतिरोध नही करता ? इस अर्थ मे यह उपन्यास स्थिति-प्रधान भी है और यथास्थिति के विरुद्ध विद्रोह भी।

व्यापक पृष्ठभूमि और चरित्रो की भीड़ वाले इस कथानक को केवल दो-ढाई घटे की सीमित अवधि मे समेटकर नाटक के रूप मे प्रस्तुत करने के लिए उपन्यास को बेहद निर्ममता से काटना, बदलना या नये ढग से लिखना मेरी मजबूरी थी। इस प्रयास मे मुझे बराबर सहयोग मिला नाटक की निर्देशिका श्रीमती अमाल अलाना और प्रेम मटियानी से। उनके साथ निरन्तर विचार-विमर्श करके जो आलेख तैयार किया, रिहर्सल के दौरान उसमे भी अनेक सम्पादन-संशोधन करने पड़े। मंच के लिए आलेख के अंतिम रूप तक आने मे अमाल अलाना और प्रेम मटियानी के सक्रिय सहयोग के अतिरिक्त विजय कश्यप और डॉ० हंस कुमारी का योगदान भी उल्लेखनीय है। शायद दुनिया के हर नाटक को कागज से मंच तक पहुँचने मे इसी प्रकार के सहयोगी प्रयासो और सुझावो से गुजरना पड़ता है।

मंच-प्रस्तुति के बाद

और आखिर 'महाभोज' मचित हुआ। अगर पत्र-पत्रिकाओं, नाट्य-समीक्षको और सबसे अधिक दर्शको की प्रतिक्रियाओ पर विश्वास किया जाये तो यह नाट्य-जगत की एक अभूतपूर्व घटना है। आलेख, निर्देशन, मंच-सज्जा, प्रकाश-योजना और राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के रग-मंडल के सधे और मंजे हुए कलाकारों का अभिनय—सभी बातो का कुछ ऐसा संतुलित तालमेल बैठ गया था कि नाटक के प्रभाव ने एक बार तो दर्शको को स्तब्ध कर दिया। कथ्य की प्रासगिकता को देखते हुए यह विश्वास तो हम सभी को था कि दर्शक सहज ही इसके सहभागी हो जायेंगे, लेकिन नाटक इस हद तक उनको आन्दोलित और उद्वेलित कर देगा, इसकी कल्पना नही की थी। वस्तुत इस प्रभावोत्पादक सफलता का श्रेय इसकी प्रस्तुति को ही है।

लेकिन नाटक की यह सफलता आज मेरे लिए एक सीमा भी बन गयी है। सच पूछिये तो अमाल ने जिस लगन, परिश्रम और व्यक्तिगत लगाव के साथ इसे मच-रूप दिया, उसके बाद कुछ भी कहना मेरे लिए शायद उचित नही था। हाँ, एक असहमति जो मुझे प्रारम्भ मे भी थी, आज भी है। पूरे नाटक मे सूत्रधार की कोई संगति और सार्थकता मैं नही समझ पायी। अमाल का तर्क था कि नाटक में केन्द्रीय पात्र की अनुपस्थिति मे सारी स्थितियो को एक

तटस्थ दर्शक की तरह देखकर समेटने के लिए उन्हें सूत्रधार की आवश्यकता महसूस हुई और यह काम उन्होंने मध्यवर्गीय प्रबुद्ध शोध-छात्र महेश से लिया, ताकि पूरे नाटक को एक एगिल दिया जा सके। मेरे विचार से इस प्रकार के केन्द्रीय-पात्र-विहीन और स्थिति-प्रधान नाटकों में दर्शक स्वयं सीधे स्थितियों के साथ तादात्म्य स्थापित कर लेता है, उनका सहभागी हो जाता है और स्वय ही केन्द्रीय पात्र की भूमिका निभाने लगता है। इसके अतिरिक्त नाटक की समाप्ति पर सूत्रधार का शब्दहीन सवाद इस बात को तो स्पष्ट कर देता है कि स्थितियाँ अब कहने-सुनने से परे चली गयी है, लेकिन इससे उपन्यास मे विद्रोह और संघर्ष की जिस निरन्तरता की ओर संकेत है, वह कहीं-न-कहीं धुंधला होकर टूटता-सा लगता है। बेहतर तो यह होता कि महेश किसी प्रकार बिन्दा के संघर्ष को आगे बढ़ाने वाली कड़ी के रूप में उभरकर आता और इस विश्वास की पुष्टि करता कि विद्रोह की आग दबायी तो जा सकती है, पूरी तरह कुचली नहीं जा सकती !

बहरहाल, दिल्ली के दर्शकों ने जिस गर्मजोशी और लगाव-भरे उत्साह से इस नाटक का स्वागत किया, इससे दिल्ली में इसके अनेक प्रदर्शन होने की सम्भावना बढ़ गयी है। बम्बई, कलकत्ता, पटना आदि शहरों से लगातार इसके आलेख की मांगें आ रही है और निश्चित है कि वहाँ भी इसका मंचन होगा; लेकिन क्या यह नाटक कभी उन लोगों तक भी पहुँच पायेगा जिनकी व्यथा-कथा इसमे है ? इस बात का मुझे पूरी तरह अहसास है कि अल्प-साधनों वाली छोटी-छोटी रग-मंडलियो के लिए इस तरह के बहु-पात्रीय और रंग-स्थलीय नाटको का मचन-मात्र ही अपने-आप मे एक भारी समस्या है, लेकिन साथ ही यह भी सच है कि इस तरह के नाटक ही रंग-कर्मियो के लिए चुनौती भी होते है और नये-नये मंच-कौशल या तकनीकी ईजाद के लिए प्रेरणा-स्रोत भी। आज देश के अनेक भागो मे कई नाट्य-मंडल ऐसे भी हैं, जिनके लिए नाटक मात्र एक कला-अभ्यास ही नही, बल्कि सामाजिक जागृति और संघर्ष का हथियार भी है। इनमें से यदि कुछ अपने-अपने क्षेत्र मे 'महाभोज' का मंचन करें तो यह तय है कि प्रस्तुति इतनी भव्य, कलात्मक और सफल नही होगी पर शायद सार्थक अधिक हो, क्योंकि मूलतः यही इस नाटक की आत्मा की मांग है। बड़े-बड़े नगरों के सभ्य नागरिकों के लिए 'महाभोज' की तकलीफ एवं संघर्ष सुपरिचित स्थिति से दिल दहला देने वाला, लेकिन मात्र एक कलात्मक साक्षात्कार-भर है, जबकि देश की संघर्षरत जनता के लिए साहस और प्रतिरोध का हथियार भी।

—मन्नू भंडारी

पात्र

दा साहब	मुख्यमंत्री
मुकुल बाबू	भूतपूर्व मुख्यमंत्री, विरोधी-पार्टी के नेता
अप्पा साहब	सत्तारूढ़ पार्टी के अध्यक्ष
पांडेजी	दा साहब के निजी सचिव
लखन	दा साहब का विश्वास-पात्र, सरोहा चुनाव के लिए प्रत्याशी
जमना बहन	दा साहब की पत्नी
सक्सेना	एस० पी०
सिन्हा	डी० आई० जी०
दत्ता बाबू	'मशाल' साप्ताहिक के सम्पादक
भवानी	'मशाल' का सहायक-सम्पादक
नरोत्तम	प्रेस-रिपोर्टर
महेश	रिसर्च-स्कॉलर एवं सूत्रधार
रत्ती	दा साहब का पी० ए०
मोहनसिंह	पुलिस कॉन्स्टेबल
बिसू	हरिजनों का हमदर्द, जो मार दिया गया है।
हीरा	बिसू का बाप
बिन्दा	बिसू का अभिन्न मित्र
रुकमा	बिन्दा की पत्नी
जोरावर	सरोहा का जमींदार-नुमा नव-धनाढ्य किसान
काशी	मुकुल बाबू का विश्वसनीय कार्यकर्ता
थानेदार	सरोहा का थानेदार, जोरावर का चमचा
लठैत	जोरावर का आदमी
लड़की	जोरावर की लड़की
जोगेसर साहू	सरोहा का बनिया

दृश्य : एक

गांव का मैदान। बिसू की मां का हृदय-विदारक क्रन्दन सुनायी देता है। धीरे-धीरे मंच पर प्रकाश होता है। बिसू की लाश रखी है, उसकी मां छाती पीट-पीटकर रो रही है। बाप घुटनों में सिर दिये बैठा है। चारों तरफ़ लोग जमा हैं। माहौल में सनसनी और तनाव है। रिसर्च-स्कॉलर महेश, जो सूत्रधार की भूमिका भी अदा कर रहा है, अपनी जगह से चलकर आगे आता है। बाक़ी दृश्य फ्रीज़ हो जाता है।

सूत्रधार : लावारिस लाश को गिद्ध नोच-नोंचकर खा जाते हैं। पर बिसेसर लावारिस नहीं। उसकी लाश सड़क के किनारे पुलिया पर पड़ी मिली, शायद इसीलिए लावारिस लाश का ख़याल आ गया। वरना उसके तो मां भी है और बाप भी। ग़रीब भले ही हों, पर हैं तो। विश्वास नहीं होता था कि वह मरा पड़ा है। लगता था जैसे चलते-चलते थक गया हो और आराम करने के लिए लेट गया हो। मरे और सोये आदमी में अन्तर ही कितना होता है भला ? बस, एक सांस की डोर, वह टूटी और आदमी गया। देखते-ही-देखते सारा गांव जमा हो गया। लोग एक-दूसरे को धकेलते हुए लाश के पास आ रहे हैं। भीड़ में आतंक और अजीब तरह का तनाव। एक फ़ोटोग्राफ़र तसवीरें खींच रहा है—कभी भीड़ की तो कभी लाश की। रिपोर्टर नरोत्तम चारों तरफ़ देखकर स्थिति का जायज़ा ले रहा है... साथ ही कुछ लिख भी रहा है। एक लठैत भीड़ को लाश के पास से हटा रहा है। महेश सूत्रधार की भूमिका अदा करने के बाद फिर भीड़ में जा मिलता है। वह लाश की ओर देख रहा है, बेहद

दुखी, उदास और त्रस्त !

बिसू की माँ : हाय हमार बचवा रे...अरे हमार बिटवा रे...अरे हमार गऊ जस बिटवा के कउन मार दिहिस रे...?

रुक्मा : (खुद रोते-रोते) चुप कर काकी, चुप कर...धीरज धर !

लठैत आता है, लाश के पास घिर आये तीन-चार आदमियों को धकेलकर हटाता है।

लठैत : अरे हियाँ का ज्योनार हुई रही ? चले आये सब-के-सब... हटो हियाँ से ! इन सउरन के काम न धन्धा...गाँव मा पत्ताओ खड़के तो मुदा...!

सबको धकेलकर हटा देता है। एक ओर से पांडे-जी और थानेदार आते हैं।

थानेदार : चिन्ता काहे करते हैं पांडेजी...हम अभी मुआयना करके तहकीक़ात किये लेते हैं। (चादर हटाकर लाश का अच्छी तरह मुआयना करता है। चादर ढँककर, हवा में डंडा घुमाते हुए एक चक्कर लगाता है। घूरकर सबको देखता है। लोग सहमे हुए थरथराने लगते हैं। घूमकर वापस लाश के पास आता है। सबको सम्बोधित करके) सबसे पहले को देखिए रहा लहास का ? (सब चुप। कड़ककर) बोलो, को देखिए रहा ?

जोगेसर साहू : (काँपता-थरथराता सामने आता है) हम देखा रहे, सरकार... पर हम...।

थानेदार : कौन जोगेसर ? हियाँ आओ (जोगेसर काँपता हुआ और पास आता है) जब लहास देखो आस-पास कोई अउर था ?

जोगेसर : (डरते हुए) नाही, सरकार !

थानेदार : बिसू कछु हिलत-डुलत रहा ?

जोगेसर : नाही सरकार, ऊमा तो जानै नहीं रही !

थानेदार : हूंऽऽ ! (एक बार फिर चादर हटाकर लाश देखता है। पांडे-जी से) मार-पीट या चोट का तो कोनो निसानो नहीं। खुदै कुछ खा-खुआकर सो गया होगा ससुरा।

महेश : (थानेदार के पास जाकर) नहीं-नहीं, ऐसा तो वह कर ही नहीं सकता !

लठैत : का बात है, महेस बाबू ! तोहार सगा लगत रहा का ?

थानेदार से थोड़ा-सा हटकर तीन-चार लोग धीरे-धीरे आपस में बातें कर रहे हैं।

पहला : ई सहरी बाबू ठीक कहत रहा...बिसू आपन मौत नाही मरा।

दूसरा : सो तो हमहूँ जानत हैं !

पहला : जुलुम की हद हुई गयी अब तो...जीना मुसकिल हुइ गवा हम गरीबन का तो गाँव मा !

तीसरा : सरीर मा चोट न घाव...जाने कइसे मारिस है कि...!

दूसरा : हीरा बतावत रहा कि रात मा तो घर मा ही सोवा रहा और भिनसारे लहास पुलिया पर।

जोगेसर : (थानेदार के पास जाकर रिरियाते हुए) सरकार, ई मामला मा हमार कौनो हाथ नाही ! हम बेकसूर रहिन, सरकार ! हमका बीच मा न घसीटो।

थानेदार : लेन-देन कइसे नाही ? तुमही का तो जल्दी पड़ी रही लहास देखन की। तुम तो थाना तलक घसीटे जाओगे। (हवा में डंडा घुमाकर, जोर से) तुम सब !

भीड़ में से कुछ लोग इधर-उधर सरकने की कोशिश करते हैं। सारी हलचल फ्रीज हो जाती है। सूत्रधार आगे आता है।

सूत्रधार : गांव सरोहा शहर से ज़्यादा दूर नही है, मुश्किल से बीस मील। लेकिन कुछ सालों पहले तक यही दूरी बहुत ज़्यादा थी। गांव मे जो कुछ भी घटता गांव का ही होकर रह जाता। शहर उससे एकदम बेअसर रहता, बेअसर और अछूता। लेकिन अब यह दूरी एकदम सिमट गयी है। महीने-भर पहले की ही तो बात है, गांव की सरहद से ज़रा परे हटकर जो हरिजन टोला है, वहाँ कुछ झोंपड़ियो में आग लगा दी गयी थी, आदमियों सहित ! दूसरे दिन लोगों ने देखा तो झोपड़ियाँ राख में बदल चुकी थी और आदमी कबाब में। लोग दौड़े-दौडे थाने पहुँचे, पर थानेदार साहब उस दिन छुट्टी पर थे। इसके बाद गाँव वालों को तो न जाने कौन-सा ज़हरीला साँप सूंघ गया कि सबके मुँह सिल गये। बस, सबकी साँसों के साथ निकला हुआ एक गुस्सा, एक नफरत भारी तनाव बनकर हवा में यहाँ से वहाँ तक सनसनाता रहा। लेकिन शहर में अखबार वालों ने इस घटना को खूब उछाला। विधान-सभा में भी जमकर हंगामा हुआ !

दूर से बिन्दा आता हुआ दिखायी देता है। चेहरे पर दुख और गुस्से का मिला-जुला भाव। उसे

देखते ही गाँव वाले आपस में फुसफुसाते हैं— 'बिन्दा आइ गवा...बिन्दा आइ गवा।' बिन्दा आकर हीरा के पास खड़ा हो जाता है। गाँव वाले एकदम चुप होकर बिन्दा की ओर देखते हैं।

नरोत्तम : (थानेदार से) यह आदमी कौन है ?

थानेदार : बिसू का साथी है।

नरोत्तम : इसके आते ही सब चुप क्यों हो गये ? कोई खास आदमी है क्या ?

थानेदार : अरे खास-वास कुछ नहीं...बस, हरिजनों को भड़काने वाला।

एम्बुलेंस की आवाज सुनायी देती है।

पाण्डेजी : (बहुत व्यस्त-से हीरा के पास जाकर) गाड़ी आ गयी बाबा, लाश चीर-फाड़ के लिए शहर जायेगी। तुम लोग भी साथ जाओगे। डॉक्टरी जाँच के बाद...।

हीरा : (जो इतनी देर से चुप-चुप रो रहा था, एकदम फूट पड़ता है) नहीं, हमार बचुआ का सरीर छलनी न करो...अरे हमार बिटवा का फूल जइसा सरीर...!

पाण्डेजी : (हीरा की पीठ सहलाते हुए) यह तो बहुत जरूरी है, बाबा... वरना पता कैसे लगेगा कि मौत कैसे हुई ?

थानेदार : (आसपास खड़े लोगों से) अरे बढ़कर लहास उठाओ !

बिसू की माँ लाश से चिपट जाती है, जैसे लाश को ले जाने नहीं देगी। रुक्मा और एक-दो औरतें उसे पकड़कर सम्भालती हैं। बिन्दा सबको धकेलता हुआ अकेला ही लाश उठा लेता है। कुछ लोग माँ-बाप को पकड़कर लाश के पीछे-पीछे ले जाते हैं। फोटोग्राफर फ़ोटो खींचता हुआ पीछे-पीछे जाता है। थानेदार भी निकल जाता है। गाँव वाले फिर सिमटकर पास आ जाते हैं।

पहला : बिन्दा आवा तो मुला कछु बोला नहीं।...का बात है ?

दूसरा : ऊका मुँह नाही देखा...कइसा तमतमाय रहा...अब ऊ चुप्पे बइठे वाला नाही।

थानेदार लौटकर आता है।

थानेदार : कौनो ससुरा हियाँ से हिलेगा नहीं, अभी बयान हुई है सबका !

सब जहाँ के तहाँ स्थिर हो जाते हैं। सूत्रधार आगे आकर।

सूत्रधार : आज तो सरोहा में पत्ते का हिलना भी एक घटना की अहमियत रखता है। महीने-भर बाद ही तो चुनाव है। यों तो चुनाव विधान-सभा की एक सीट-भर का है, फिर भी है बहुत महत्व-पूर्ण, क्योंकि इस सीट के लिए भूतपूर्व मुख्यमंत्री सुकुल बाबू खुद खड़े हो रहे हैं, यानी कि पिछले चुनाव मे हारी हुई पूरी-की-पूरी पार्टी खडी हो रही है—खम ठोककर, ललकारती हुई, सत्तारूढ पार्टी के पूरे अस्तित्व को चुनौती देती हुई। सीट केवल एक, पर पूरे मंत्रिमंडल के लिए जैसे एक चुनौती। यही कारण है कि आज सरोहा मे घटी छोटी-से-छोटी घटना भी इसी सीट के साथ जोड़कर देखी-परखी जा रही है। वरना और दिन होता तो क्या तो बिसू और क्या बिसू की मौत!

अन्तिम वाक्य के साथ ही मंच पर धीरे-धीरे अन्धकार।

दृश्य : दो

शहर—'मशाल' साप्ताहिक का कार्यालय। भवानी अपनी मेज पर फैली फ़ाइलों में व्यस्त। कभी एक फ़ाइल खोलता है तो कभी दूसरी। उसके स्वभाव का उतावलापन उसके काम करने के ढंग से साफ जाहिर है। बीच-बीच में वह कुछ गुनगुनाता भी रहता है। नरोत्तम का प्रवेश। चुस्त-दुरुस्त, लेकिन गर्मी में लम्बा सफ़र करने के कारण चेहरे पर थकान, धूल और पसीना।

नरोत्तम : दत्ता बाबू नहीं आये अभी तक ?

भवानी : (ऊपर से नीचे तक नरोत्तम के हुलिये का मुआयना करके) आकर फिर गये हैं काम से ! ...पर तुमने अपना ये हुलिया क्या बना रखा है ?

नरोत्तम : सरोहा से सीधा यहीं चला आ रहा हूँ। (कंधे पर लटका झोला मेज पर डालकर कुर्सी पर पसर जाता है।) वहाँ आज फिर एक और हत्याकांड हो गया। सवेरे-सवेरे पुलिया पर लाश पायी गयी।

भवानी : (उत्सुकता से) सरोहा में...किसकी लाश ?

नरोत्तम : बिसेसर नाम के किसी आदमी की, जिसे सब बिसू कहते थे ! ...वैसे शरीर पर चोट या घाव का तो कोई निशान नहीं था, न ही आसपास कोई हथियार मिला।

भवानी : (यह सुनकर ही जैसे उत्साह ठंडा पड़ गया हो) यानी नॉर्मल डेथ ?

नरोत्तम : नॉर्मल ? सरोहा में कुछ भी नॉर्मल रह सकता है आजकल ? अभी तो पता खडकेगा तो वह भी एक घटना। हैडलाइन बने ऐसी न्यूज ! चुनाव की सरगर्मी शुरू हो गयी है।

भवानी : चुनाव क्या, जुम्मन पहलवान के अखाड़े का दंगल ही समझो ! भूतपूर्व मुख्यमंत्री सुकुल बाबू खड़े हुए हैं खम ठोककर।...

लेकिन ये बिसेसर कौन था ?

नरोत्तम : वही के एक खेत-मज़दूर का लड़का। हरिजनों का हमदर्द, चाहो तो लीडर भी कह लो।

भवानी : (प्रसन्न होकर) हरिजनों का लीडर ! (फ़ाइलें एक तरफ़ सरकाकर कुर्सी का मुंह नरोत्तम की ओर कर लेता है) अरे वाह ! तब तो मामला तूल पकड़ेगा...दो अंको का मसाला पक्का ! (क्षणिक विराम) यह बताओ, पुलिस-वुलिस पहुँची या नहीं ?...पिछली बार तो हद कर दी थी। नौ-नौ आदमियो को जिन्दा जला दिया गया और दो दिन तक पुलिस के नाम पर खाकी टोपी तक नही दिखायी दी गाँव में !

नरोत्तम : इस बार तो मुख्यमंत्री के खासुलखास पांडेजी वहाँ मौजूद थे ! थानेदार भी तुरन्त मौक़े पर हाजिर। पोस्टमार्टम के लिए लाश शहर पहुँच चुकी है। सब काम फटाफट ! (सिगरेट सुलगाकर) अच्छा भवानी भाई, ऐसा नही लगता कि सरोहा मे खेत-मालिकों के अत्याचार बहुत बढते जा रहे हैं ? कानून का तो जैसे कोई डर ही नही रह गया !

भवानी : जब सैया भये कोतवाल तो डर काहे का !...इन लोगों तक पहुँचते-पहुँचते कानून भी साला लँगड़ा हो जाता है !

नरोत्तम : कभी-कभी सोचता हूँ कि आज़ादी मिले इतने साल हो गये, लेकिन आज भी इस तबके की हालत ! आदमियों को जानवरो की तरह ट्रीट किया जाता है। इट्स रियली हॉरिबल... रादर शेमफुल !

भवानी : पर आती किसे है शर्म ? सब जगह यही हाल है !

नरोत्तम : (क्रोध और क्षोभ के साथ) जातिवाद का जैसा घिनौना रूप आज़ादी के बाद देखने को मिला है, वैसा...।

भवानी : खैर, ये इंटलेक्चुअल दुख की बातें बाद मे...फिलहाल आप सरोहा की रिपोर्ट तैयार करवाइये (पैन खोलकर नोट करने की मुद्रा में) गाँव वालो का रिएक्शन ?

नरोत्तम : पहला रिएक्शन शॉक...दूसरा आतंक ! (क्षणिक विराम) लेकिन उसके माँ-बाप का रोना अगर एक बार सुन लेते न आप...उफ !

भवानी : अपना फ़ोटोग्राफ़र तो पहुँच नही पाया होगा ?

नरोत्तम : कहाँ, पुरी से कान्टेक्ट करने का कोई चान्स ही नही बना। वैसे वहाँ एक फ़्री-लान्सर तसवीरें खींच रहा था, उसी से बात कर

ली है। अगले अंक के लिए मिल जायेंगी !

भवानी : यार, पुरी की बात ही कुछ और है। पिछली बार आगजनी की घटना के क्या-क्या फ़ोटोग्राफ़्स लिये थे उसने—दिल दहला देने वाले। मैक्सिमम फ़ोटोग्राफ़्स और मैक्सिमम डीटेल्स दिये थे 'मशाल' ने उस घटना के और इसीलिए वे दो अंक बिके भी यों थे (चुटकी बजाकर) लाइक हॉट केक्स !

नरोत्तम : कितनी भयंकर घटना थी ! गाँव से लेकर विधान-सभा तक तहलका मच गया था, लेकिन हुआ क्या ? किसी को सज़ा होना तो दूर—पन्द्रह दिन के भीतर-भीतर सारी बात सीन पर से गायब ही हो गयी एकदम !

भवानी : ग़ायब हुई नहीं नरोत्तम बाबू, कर दी गयी...बड़ी सफ़ाई से। इसी को कहते हैं राजनीतिक करिश्मा, जो अपने यहाँ होता ही रहता है।

नरोत्तम : लेकिन इस बार दबाना इतना आसान नहीं होगा। सुकुल बाबू इतना तूल देंगे इस बात को, और देखना इसी चक्कर में हरिजनों के काफ़ी वोट झटक लेंगे।

भवानी : (सहमति जताते हुए) राइट यू आर ! वैसे भी सुकुल बाबू के मुकाबले में लखन को खड़ा करके संकट तो खड़ा कर ही लिया है दा साहब ने अपने लिए !...उनके अपने मंत्रिमंडल के लोग ही बहुत असन्तुष्ट हैं इस बात से। देखना, इतने दंड पेलने पड़ेंगे दा साहब को इस चुनाव में कि छठी का दूध याद आ जायेगा।

नरोत्तम : अच्छा भाई देखो, मुझे तो जाना है घर। लेकिन जाने से पहले यह बता दो कि यह खबर जायेगी किस पेज पर ?

भवानी : हूंऽऽ—यह तो देखना पड़ेगा। (डमी उठाकर पलटते हुए) अंक तो सारा कम्पोज हो गया। बस खेल-खिलाड़ी वाला पेज बाक़ी रह गया है।

नरोत्तम : अरे वो कोई कुश्ती में थोड़े ही मारा गया है जो खेल-खिलाड़ी में दोगे ! (ज़रा गम्भीरता से) देखो, न्यूज़ जायेगी फ्रंट-पेज पर, समझे !

भवानी : फ्रंट-पेज पर ?

नरोत्तम : और मैं यहाँ भागा-भागा आया किसलिए हूँ ? (डमी लेकर देखते हुए पढ़ता है) झिंझाड़ में बलात्कार ! (भवानी से) ये झिंझाड़ कहाँ हुआ ?

भवानी : ठीक से तो मुझे भी नहीं मालूम...नक्शे में कहीं तो होगा ही ! एक दैनिक में छपी थी यह खबर...वहीं से उठाकर डाल दी !

नरोत्तम : तो इस कॉलम को डिस्ट्रीब्यूट करवाकर सरोहा की खबर यहाँ डालो।

भवानी : यहाँ नहीं डल सकती ! जानते नहीं, दत्ता बाबू के आदेश से फ्रंट-पेज का यह कॉलम बलात्कार की घटना के लिए रिजर्व्ड है।

नरोत्तम : (भौंहें चढ़ाकर) क्या ? रिजर्व्ड है ? और नहीं तो बलात्कार की घटना तो ? ...दत्ता बाबू खुद करते हैं ! (चेहरे पर क्रोध उभर आता है।)

भवानी : (कान पर हाथ लगाकर) तौबा-तौबा ! कुछ तो बुजुर्गवार का खयाल करो।...देखो यार, इतना बड़ा देश है—कहीं-न-कहीं तो होगा ही।

नरोत्तम : और वह आपके लिए इतना महत्वपूर्ण है कि फ्रंट-पेज पर छपे !

भवानी : महत्वपूर्ण तो कतई नहीं, पर अखबार बिकता ऐसी ही खबरों से है ! ...आखिर सेल...।

नरोत्तम : (एकदम भभक पड़ता है) सेल-सेल ! कोई कमिटमेंट नहीं है आप लोगों का ? यदि ऐसा ही है तो अखबार बन्द करके पान की दुकान खोल लीजिए। खूब बिकेंगे...बहुत सेल होगी ! (थैला उठाकर) मैं किसी दूसरे अखबार में...।

भवानी : रुको मेरी जान ! गुस्सा तो बस तुम्हारी नाक पर बैठा रहता है।...पहले बैठकर चाय पियो। (घंटी बजाता है। लड़का आता है) दो चाय स्पेशल ! एकदम गरम ! नरोत्तम बाबू बहुत गर्मी से आ रहे हैं—इन्हें ठंडा करना है। (लड़का मुस्कराता हुआ चला जाता है। भवानी कुछ सोचते हुए) आइडिया ! क्यों न हम एक एडीशनल पेज डाल दें, सरोहा परिशिष्ट करके...चुनाव में अब सरोहा पर तो कंसनट्रेट करना ही है—इसी अंक से सही ! (गरदन जरा आगे निकालकर) अब तो मानोगे कि हमारा भी कोई कमिटमेंट है ?

नरोत्तम : (एकदम प्रसन्न होकर) वाह ! यह हुई न कुछ बात !

दत्ता बाबू का प्रवेश। चेहरे पर थकान और परेशानी।

भवानी : लो, दत्ता बाबू भी आ गये।

दत्ता बाबू : (नरोत्तम से) तुम सरोहा से कब लौटे ?

नरोत्तम : सीधा वहीं से चला आ रहा हूँ और ऐसी खबर लाया हूँ कि भवानी भाई एक एडीशनल पेज डालने की कह रहे हैं।

दत्ता बाबू : (आक्रोश और खीज के साथ) क्यों, कोई लॉटरी निकल आयी है क्या भवानी के ? (दोनों दत्ता के स्वर और तेवर से थोड़ा क्षुब्ध हो जाते हैं) तुम्हें पता है, मैं कहाँ से आ रहा हूँ ? (क्षणिक विराम) एलाइड इंडिया वालों के यहाँ गया था। उन्होंने पिछला पैसा नहीं दिया है और इस अंक से विज्ञापन बन्द करने के लिए कह दिया है। (गुस्से से हाथ का बैग टेबिल पर रखता है)

भवानी : लेकिन इस अंक में तो विज्ञापन जा चुका है।

दत्ता बाबू : जाता रहे, वो पैसा नहीं देंगे। और अगर यही हाल रहा सेल का तो जो बचे-खुचे विज्ञापन हैं, उन्हें भी बन्द होते देर नहीं लगेगी। (स्वर में शिकायत का पुट उभर आता है) विज्ञापन मिलते हैं सेल पर और सेल निर्भर करती है मैटर पर। (बैठते हैं) मुझसे जितना बन पड़ता है दौड़-धूप करके अखबार को चलाये रखने की कोशिश करता हूँ...पर इस घाटे के सौदे को आखिर कब तक खींचा जाये ?...कब तक ? (क्षणिक विराम) मैं तो कहता हूँ, अगले अंक से अखबार बारह पेज का कर दो। सोलह पेज का अखबार निकालने के लिए न तो हमारे पास साधन हैं और न ही ढंग का मैटर !

भवानी के चेहरे पर नाराजगी का भाव स्पष्ट दिखायी देता है। उसे लगता है जैसे दत्ता बाबू उसी को लक्ष्य करके कह रहे हैं।

नरोत्तम : लेकिन दत्ता बाबू, इलेक्शन के दिनों में आपका यह फैसला...!

दत्ता बाबू : इलेक्शन के दिनों में रुपये क्या पेड़ों पर लगते हैं ?

नरोत्तम : यही तो मौका है 'मशाल' की स्थिति सुधारने का। इस चुनाव में मैटर भी खूब मिलेगा और सेल भी इतनी बढ़ेगी कि बस... पर आप कोई पॉलिसी तो बनाइये ! कोई स्टैंड तो लीजिये...

दत्ता बाबू : यहाँ खड़े होने के लिए पाँव के नीचे जमीन नहीं, तुम स्टैंड कितना जरूरी होता है अखबार की इमेज बनाने के लिए ! लेने की बात कर रहे हो।...बच्चे हो अभी तुम ! तुम्हें पता है, पिछले छह महीनों में कितना ह्यूमिलिएशन बरदाश्त किया

है मैंने रुपयों का इन्तज़ाम करने में ! मैं और भवानी तो शुरू में ही अपना पैसा लगाकर कंगाल हो चुके हैं...अब ये हर अंक का घाटा कहाँ से पूरा हो ? बिना सरकारी विज्ञापनों के और कागज़ के पूरे कोटे के कहीं अखबार चल सकता है भला ? यह तो प्रेस की थोड़ी-बहुत कमाई है जो दाल-रोटी मयस्सर हो जाती है, वरना...।

लड़का दो कप चाय लेकर आता है। दत्ता की मेज़ पर रखकर वहीं खड़ा हो जाता है।

दत्ता बाबू : एक चाय और लेकर आओ ! **(लड़का दौड़ जाता है। दत्ता कप उठाकर एक घूंट भरता है। नरोत्तम से)** तुम किस खबर की बात कर रहे थे ?

नरोत्तम : **(दत्ता बाबू की बातों के बाद उसका उत्साह ठंडा पड़ गया है)** सरोहा में आज सवेरे-सवेरे पुलिया पर बिसू नाम के एक आदमी की लाश पायी गयी।

दत्ता बाबू : कौन है ये बिसू ?

नरोत्तम : हरिजनों का लीडर-वीडर था कुछ।

दत्ता बाबू : अच्छा !

नरोत्तम : गाँव में काफ़ी तनाव है।

दत्ता बाबू : ओह आइ सी ! **(सोचते हुए)** आगज़नी की घटना के साथ तो कुछ सम्बन्ध नहीं है इसका ? **(भवानी से, जो नाराज़-सा बैठा है)** तुम क्या सोचते हो, भवानी ?

भवानी : **(नाराज़गी से)** मैं सोचता हूँ, अखबार के चार पेज कम कर देने चाहिए।

दत्ता बाबू : **(भवानी को मनाने के इरादे से उठकर उसके पास जाते हैं)** तुम्हारे खयाल से किसका हाथ हो सकता है इस हत्या के पीछे ?

भवानी : **(उसी तरह)** मेरा नहीं है, बाकी लोगों की वो जाने !

दत्ता बाबू : **(कंधा थपथपाकर)** अब बस भी करो, भवानी ! तुम तो ज़रा-ज़रा सी बात पर तुनक जाते हो।

भवानी : क्या तुनक जाते हो...जब भी कोई ऐसी घटना घटती है जिसे लेकर बढ़िया स्टोरी तैयार की जा सके तभी आप पेज घटाने की बात करेंगे और फिर मैटर को लेकर शिकायत।

दत्ता बाबू : जब आमदनी के ज़रिए तो बन्द होते जायें और कागज़ वाले, टाइप-फाउंड्री वाले, स्याही वाले हर समय सिर पर सवार

हों वसूली के लिए तो और क्या करूँ ? खर्चा घटाने की बात तो करूँगा ही।

लड़का चाय लेकर आता है। दत्ता बाबू खुद चाय लेकर भवानी को देते हैं। भवानी चाय ले लेता है।

दत्ता बाबू : अच्छा बताओ, वो एडिशनल पेज का तुम्हारा क्या आइडिया है ? (भवानी जवाब नहीं देता तो खुशामद-सी करते हुए) अब बता भी दो, यार !

भवानी : (चाय का प्याला रखकर पहले वाले उत्साह के साथ) देखिये, इस वारदात से मुकुल बाबू की अधपकी खिचड़ी में निश्चित रूप से एक जोर का उबाल आयेगा। इसीलिए हम सोच रहे थे कि अपनी तरफ से भी कुछ मिर्च-मसाला मिलाकर इसका पुलाव बनाया जाये और एक एडिशनल पेज पर सजाकर जनता-जनार्दन को परोस दिया जाये।

नरोत्तम : हैड-लाइन होगी—सरोहा में आज सवेरे-सवेरे पुलिया पर एक आदमी की लाश पायी गयी।

भवानी : धत्तेरे की ! इतनी सपाट हैड-लाइन ! (एक क्षण सोचने के बाद नाटकीय मुद्रा में) सरोहा में फिर एक रहस्यात्मक हत्या ! लाश पुलिया पर मिली—गाँव में भारी खलबली। (सहज होकर) हैड-लाइन हमेशा कैची होनी चाहिए, जो पढ़े वो अखबार जरूर खरीदे।

नरोत्तम : लेकिन अभी मौत का कारण कहाँ पता लगा है ?

भवानी : कारण जो पता लगेगा वो अगले अंक मे जायेगा।...आप देखिये तो दत्ता बाबू, पूरे तीन अंकों का मसाला निचोड़ेंगे इस घटना से।

दत्ता बाबू : (हथियार डालने के भाव से) ठीक है भाई, अगर तुमको इतना ही भरोसा है कि इससे अखबार की बिक्री बढ़ जायेगी तो डाल दो पेज।...लेकिन हैड-लाइन के बाद इस पेज में दोगे क्या ? है कुछ मैटर ?

भवानी : (कुछ सोचते हुए) मैटर के लिए नरोत्तम तुम फिर सरोहा जाओ और गाँव वालों के और उसके घर वालों के इंटरव्यू लेकर आओ।

नरोत्तम : कौन देगा इंटरव्यू ? डर के मारे मुँह सिले हुए हैं सबके।

दत्ता बाबू : तुम काशी को जानते हो ? (नरोत्तम प्रश्नवाचक भाव से तीनों सोच में पड़ जाते हैं।

देखता रहता है) अरे भाई वही, सुकुल बाबू का इलेक्शन-कमांडर।

नरोत्तम : जानता तो नहीं, लेकिन चुनाव के चक्कर में दिखायी देते हैं आजकल सरोहा में।

दत्ता बाबू : *तो उसको पकड़ो जाकर। वो लोकल आदमी है, रेशा-रेशा* उधेड़कर रख देगा इस घटना का अपनी कमेट्री के साथ!

भवानी : मौक़ा लगे तो वहाँ के खेत-मालिकों को भी छान लेना। दोनों पक्षों की बात होगी तो कॉन्ट्रोवर्सी पैदा की जा सकती है।

दत्ता बाबू : बस अब तुम आँधी की तरह जाओ और तूफ़ान की तरह लौटो।

भवानी : कल सबेरे तक सारा मैटर और तीन फ़ोटोग्राफ़्स—एक लाश का, एक रोते हुए माँ-बाप का और एक डरे-सहमे लोगों का—मुझे मिल जायें तो परसों इस पेज के साथ ही अंक निकले।

नरोत्तम फुर्ती से थैला उठाकर चलता है। भवानी दरवाज़े तक उसके साथ जाता है और 'बेस्ट ऑफ़ लक' कहकर उसे विदा करता है। अन्धकार।

दृश्य : तीन

दा साहब की कोठी का भीतरी भाग। कमरा दो हिस्सों में बँटा है। एक ओर उनकी बैठक, जिसमें गद्दीदार कुर्सियाँ और सेंटर टेबिल। दूसरी ओर उनका घरेलू दफ़्तर, जिसमें दीवार के सहारे मोटा गद्दा बिछा है, गाव तकिये लगे हैं। एक ओर डेस्क पर करीने से लगी फ़ाइलें, दूसरी ओर चौकी पर दो टेलीफोन। पीछे रैक पर पुस्तकें। दोनों कमरों में गांधी, नेहरू की बड़ी-बड़ी तसवीरें। दा साहब के दफ़्तर से जुड़ा उनके पी० ए० रत्तो का छोटा-सा केबिन। टेबिल पर टाइप-राइटर और फ़ोन। बैठक का दरवाजा भीतर की ओर जाता है और दफ़्तर का बाहर की ओर। दा साहब कुर्सी पर बैठे हुए गीता पढ़ रहे हैं। सौम्य-शान्त चेहरा, गुरु-गम्भीर वाणी। कमरे के दूसरे सिरे पर जमना बहन बैठी कुछ सिलाई कर रही हैं।

दा साहब : प्रजहाति यदा कामान्, सर्वान् पार्थ मनोगतान्।
आत्मन्येव आत्मनो. तुष्ट· स्थितप्रज्ञ. तदोच्चते॥
दुखेषु अनुद्विग्न मनः सुखेषु विगत स्पृह.।
वीतराग भय-क्रोधी स्थित धीः मुनिरुच्यते॥

तमतमाया हुआ लखन भीतर घुसता है। उसके हाथ में 'मशाल' का ताजा अंक है।

लखन : (बहुत आवेश में) मैं कहता न था कि ये जोरावर... (एकाएक याद आता है कि जमना बहन के पैर छूना भूल गया— बढ़कर पैर छूता है)

जमना बहन : (उसके आवेश को देखकर, स्नेह से सिर पर हाथ फेरते हुए) क्या बात है, बाहर बहुत गर्मी है क्या ?

लखन : बाहर क्या, गर्मी तो मेरे भेजे में घुसी हुई है। ये जोरावर

खुद तो मरेगा ही, हमको भी ले डूबेगा।

जमना बहन : हुआ क्या, क्यों इतना तमतमा रहा है?

लखन : (अखबार देते हुए) अभी तो कुछ नहीं हुआ, बहुत मामूली-सी बात हुई है—एक आदमी की हत्या! असली बात तो तब होगी जब हरिजनों के सारे वोट सुकुल बाबू के नाम पड़ जायेंगे।

जमना बहन : क्यों ? (अखबार पढ़ने लगती हैं)

लखन : (उसी आवेश में) जोरावर के सिवाय कोई नहीं करवा सकता है यह काम।

दा साहब : (उसी जगह बैठे-बैठे शान्त स्वर में) पुलिस तो अभी तहक़ीक़ात ही कर रही है और तुम नतीजे पर भी पहुँच गये?

जमना बहन : (अखबार में देखते हुए) वो नहीं पहुँचा नतीजे पर। सारा गाँव कह रहा है, अखबार में भी छप गया है।

दा साहब : कानून अनुमान पर नहीं, प्रमाण पर चलता है!

लखन : जुट जायेंगे इस बार प्रमाण भी। बिसू का एक दोस्त है बिन्दा। कसम खाकर बैठा है!

दा साहब : जुट जायेंगे तो सजा पायेगा अपने जुर्म की।

लखन : वो तो सजा पायेगा अपने जुर्म की, लेकिन उससे बड़ी सजा तो हम पायेंगे...वह भी बिना कोई जुर्म किये!

दा साहब : होता है कभी-कभी ऐसा भी। एक की मूर्खता का फल दूसरे को भुगतना पड़ता है।

लखन : और आप हैं कि इसी मूर्ख का पल्ला पकड़े हुए हैं। मारा है गरीबों को तो भुगतने दीजिये जोरावर को। नहीं चाहिए हमें उसके वोट। आगजनी के चक्कर में हरिजनों के वोट तो गये ही, अब गाँव के दूसरे लोगों के वोट भी नहीं मिलेंगे। माथे पर कलंक और आत्मा पर बोझ, सो अलग!

जमना बहन : (अखबार एक तरफ़ रखकर) अच्छा अब तू इन्हें शान्ति से नाश्ता कर लेने दे। (उठकर नाश्ते की प्लेट दा साहब के सामने रखती है)

दा साहब : लखन का नाश्ता?

जमना बहन : ये सब इसके गले कहाँ उतरता है, इसकी पूरी मठरी तो बनकर आयेगी अभी। (दा साहब नाश्ता शुरू करते हैं। कुछ विराम के बाद) आगजनी वाली घटना को किसी तरह संभाले थे। घरेलू उद्योग योजना के मरहम ने घावों

भर भी दिया था...इसी स्थिति में चुनाव हो जाता तो ठीक था।

दा साहब : कैसी बातें करती हो ? आर्थिक सहायता से गरीबी पर जरूर मरहम लगाया जा सकता है, पर प्रियजनों के बिछुड़ने के दुख पर नहीं। आदमी का दुख जिस दिन पैसे से दूर होने लगेगा, इंसानियत उठ जायेगी दुनिया से।

लखन : (गुस्से और परेशानी से) ऐन मौके पर इस बेवकूफ़ ने बिसू को मरवा दिया। अब कुछ नहीं होने का। सारा हिसाब लगाकर देख लिया है मैंने।

जमना बहन : चुनाव में क्या खड़ा हुआ, तेरा मन तो सारे दिन हिसाब-किताब के आँकड़ों में ही उलझा रहता है, लेकिन इनको तो सही-गलत का भी खयाल रखना पड़ता है।

लखन : तो सही किया है जोरावर ने ? किसी को मरवा देने को सही कहेंगी आप ?

जमना बहन : राम रे ! तूने तो हद ही कर दी। पन्द्रह साल की उम्र से तू दा साहब का थैला उठाये-उठाये उनके पीछे चला करता था। इनके साथ रहकर इतना सीखा-समझा, आज चुनाव में खड़ा हो रहा है, पर इनके स्वभाव का धीरज और ठहराव नाम को भी नहीं है तुझमें।

दा साहब : (प्रवचनीय मुद्रा में) दोष इसका नहीं, उम्र का है। लेकिन आवेश राजनीति का दुश्मन है। राजनीति में विवेक और धीरज चाहिए। आयेगा, पद पर बैठोगे तो जिम्मेदारियाँ स्वयं सिखा देंगी।

लखन : कहाँ रखा है पद-वद ? ये बिसू की नहीं, समझ लीजिये, मेरी हत्या हुई है, मेरी ! दस तारीख को मीटिंग का ऐलान हो गया है, सुकुल जी की तरफ़ से। खुद आ रहे हैं भाषण देने। जानते तो हैं सुकुल जी के भाषण का करिश्मा। आग उगलते हैं, आग। गाँव वैसे ही सन्नाया बैठा है। एक ही भाषण में बहाकर ले जायेंगे। (दा साहब अब भी वैसे ही शान्त और अविचलित) एक इन 'मशाल' वालों को छूट मिली हुई है, उलटा-सीधा जो मरज़ी छापने की। देखिये तो, एक पेज का सप्लीमेंट छापा है इस मामूली-सी घटना के लिए। ऐसे अखबार पर तो पाबन्दी...।

दा साहब : गलत बात है। यह तुम नहीं, तुम्हारा स्वार्थ बोल रहा है।

अखबारों को तो स्वतंत्र होना ही चाहिए। वे ही तो हमारे कामों के असली दर्पण होते हैं। हाँ, अपनी छवि देखने का साहस होना चाहिए।

जमना बहन : लेकिन कोई सीमा तो होनी चाहिए। चुनाव के मौके पर इस तरह की झूठी-सच्ची बातों को भुनाना भी कहाँ की नैतिकता है ?

लखन : कैसे-कैसे सम्पादकीय छापे थे आगजनी की घटना के...और अब क्या चुप रह जायेंगे ? आने दीजिये 'मशाल' का अगला अंक...।

दा साहब : (हलकी मुस्कान) कुछ ठंडा पियोगे ? फालसे का शर्बत ? पियो, इसकी तासीर ठंडी होती है।

जमना बहन : हाँ, कुछ खा भी ले। भन्ना रहा है भूख के मारे। देखूँ, क्या खबर है तेरे नाश्ते की ? (जमना बहन अन्दर जाती हैं। दा साहब अपने दफ़्तर की ओर बढ़ते हैं)

दा साहब : क्या नाम है इस लड़के का जो मरा ?

लखन : बिसेसर, बिसू कहते हैं गाँव वाले।

दा साहब : आठ महीने पहले ही तो छूटकर आया है न ये लड़का ? सुकुल बाबू के समय में चार साल तक जेल काटी है इसने ?

लखन : (आश्चर्य से) आपको कैसे मालूम ?

दा साहब : (गद्दे पर बैठते हुए) मालूम तो करना ही होता है, भाई। वरना जिस पद पर बैठा हूँ, उसके साथ न्याय कर सकता हूँ भला ? (लखन के चेहरे पर आश्चर्य और जिज्ञासा का भाव) डी० आई० जी० सिन्हा का फोन आया था सवेरे।

लखन : (अधीर होकर) क्या बताया ?

दा साहब : किस बारे में ?

लखन : यही, बिसू की मौत के बारे में ? मालूम हुआ है, इस केस के सारे कागजात डी० आई० जी० सिन्हा के पास पहुँच गये हैं। आपने कोई आदेश नहीं दिया...?

दा साहब : हाँ, कहा है कि सारे मामले को बहुत गौर से देखकर खुद ही रिपोर्ट तैयार करें। (एक फ़ाइल खींचकर देखने लगते हैं)

लखन : दा साहब, अगर रिपोर्ट तैयार करते समय कुछ... (जैसे पूरी बात कहने का साहस नहीं जुटा पाता)

दा साहब : (सख्ती से) कैसी बात करते हो, लखन ? पुलिस वालों का काम है कि बयानों और प्रमाणों के आधार पर ईमानदारी से

रिपोर्ट तैयार करें। यदि ऊपर से कोई आदेश थोपा जायेगा तो न्याय कैसे करेंगे...?

लखन सिटपिटा जाता है। दा साहब टेलीफ़ोन का बज़र दबाते हैं।

रत्ती : जी साब ?

दा साहब : वित्तमंत्री से बात करवाओ, घर पर ही होंगे अभी। (दा साहब फ़ाइल के पन्ने पलटते रहते हैं और रत्ती फ़ोन मिलाता है) चौधरी जी ! नमस्कार...नहीं भाई, कोई विशेष बात नहीं। घरेलू उद्योग योजना की फ़ाइल आयी है मेरे पास। त्रिभुवन बाबू से बात भी हुई थी। बता रहे थे कि वित्त विभाग को इस योजना के लिए आवश्यक फंड देने में कुछ आपत्ति है। होनी नहीं चाहिए। (कुछ देर सुनते हुए) क्या ? प्लेनिंग कमीशन की सैंक्शन नहीं आयी—देखो, वह सब हो जायेगा, मैं बात कर लूंगा, लेकिन इस मद में तो आपको तुरन्त रुपया रिलीज़ करना है। यह मत भूलिये कि पार्टी के प्रमुखतम उद्देश्यों में से एक है—हरिजनों और खेत-मज़दूरों का उत्थान। वचनबद्ध हैं हम...इस योजना को तो प्राथमिकता मिलनी ही चाहिए।... अच्छा, नमस्कार। (फ़ोन रख देते हैं। चेहरे पर हलका-सा तनाव)

उपर्युक्त संवाद के बीच ही पांडेजी आकर एक ओर खड़े हो जाते हैं और दा साहब उन्हें आँखों से ही बैठने का आदेश दे देते हैं।

दा साहब : हाँ पांडे, हो गया सब ?

पांडे हाथ की फ़ाइल दा साहब को देता है। वे उसे कुछ देर उलट-पुलट कर देखते हैं फिर लखन की ओर बढ़ा देते हैं।

: लखन, ये फ़ाइल संभालो। और धीरे-धीरे चीज़ें अपने हाथ में लो—अधिक समझदारी और ज़िम्मेदारी के साथ। (पांडे से) सुकुल बाबू की मीटिंग की तैयारी ?

लखन आगे बढ़कर फ़ाइल ले लेता है, पर उसके चेहरे पर अभी भी ग़ुस्सा और परेशानी स्पष्ट है।

पांडेजी : बहुत ज़ोर-शोर से हो रही है, साब ! समझ लीजिये कि सुकुल बाबू नहीं, हारी हुई पूरी पार्टी खड़ी हो रही है। हमको भी अपनी पूरी ताकत लगानी पड़ेगी, साब !

दा साहब : जानता हूँ।

पांडेजी : अपने लोगों पर भी नजर रखनी होगी, साब ! आप तो जानते हैं, लोचन भैया बहुत उखड़े हुए हैं।

दा साहब : अध्यक्ष होने के नाते पार्टी का अनुशासन अप्पा साहब की जिम्मेदारी है।

पांडेजी : सो तो है, लेकिन लखन को खड़ा करने से अप्पा साहब भी तो बहुत खुश नहीं है, साब ! (क्षणिक विराम) 'मशाल' वाले दत्ता बाबू अब दस को आयेंगे, साब ! वैसे तो उसी दिन टाइम दिया था, लेकिन आपकी अप्पा साब के साथ मीटिंग हो गयी तो कैंसिल करना पड़ा।

दा साहब : अच्छा। चुनाव-दौरे का कार्यक्रम निश्चित हो गया ?

पांडेजी : हाँ साब, तैयार है।

दा साहब : सरोहा में भाषण कब रखा है ?

पांडेजी : चुनाव के कुल चार दिन पहले।

दा साहब : हूंऽऽ। (कुछ सोचने लगते हैं)

पांडेजी : आप कहें साब तो कार्यक्रम पढ़कर सुनाऊँ ?

दा साहब : सरोहा में पहले रख लें तो ?

लखन : आप जायेंगे ? बहुत असर होगा आपके जाने का...बहुत जरूरी भी हो गया है।

पांडेजी : पहले ही रखना है साब, तो अभी रख लें।

दा साहब : यही मैं सोच रहा हूँ।

पांडेजी : सुकुल बाबू की मीटिंग दस को है, अपनी चौदह को रख लें ?

दा साहब : हूं। एक हादसा हुआ है, जाना तो चाहिए ही। बिसू के माँ-बाप को भी तसल्ली देनी चाहिए। बेचारे...!

पांडेजी : वजा फ़रमाया साब आपने। (जमना बहन का ट्रे लिये हुए प्रवेश) अरे माताजी आप...! (पांडेजी खुद ट्रे लेने के लिए बढ़ते हैं, लखन भी)

दा साहब : अपने हाथ से खिलाना इनका सबसे बड़ा सुख है।

जमना बहन : कहीं तो हम भी अपना सुख ढूँढ़ें आखिर। (सब हँसते हैं। जमना बहन लखन और पांडे को नाश्ता देती है। दा साहब चुनाव-कार्यक्रम देखने लगते हैं। लखन हिम्मत जुटाकर)

लखन : डी० आई० जी० का फ़ोन आया किसलिए था ?

दा साहब : सब अपने-अपने को लेकर परेशान हैं, भाई ! वो भी प्रमोशन के लिए छटपटा रहा है। स्वभाव है आदमी का—और

चाहिए...और चाहिए...।

जमना बहन : पर डी० आई० जी० का तबादला तो रुक गया था, तब इसका प्रमोशन कैसे होगा ?

दा साहब : मैं ही रोके हुए था अब तक। थोड़ी-बहुत ज्यादतियाँ की थी उसने, पर क्या करता ? ऊपर से आदेश मिले तो उसने पालन किया। गुलामी आत्मा का क्षय तो करती ही है।

लखन : वैसे तो आदमी अच्छा ही था, आगजनी वाले मामले में...।

दा साहब : क्या करें, हमारे पास भी ऊपर से आदेश आया है कि तबादला करो। ये ऊपर का चक्कर ही बुरा होता है।

लखन : तो प्रमोट हो रहें डी० आई० जी० ! तब तो आप बुलाकर इशारा...।

दा साहब : (हल्की-सी सख्ती के साथ) लखन ! कर्मचारियों को इस तरह के आदेश देना उनके अधिकार में हस्तक्षेप करना है। मैं तो चाहता हूँ, सबको अपने-अपने अधिकार सौंपकर अपने अधिकार शून्य में बदल दूं। (विराम) इन्हीं स्थितियों के खिलाफ़ लड़ने के लिए तो इतना संघर्ष किया था हम लोगों ने और तुम... अपनी आकांक्षाओं पर थोड़ी लगाम दो लखन, वरना मेरे साथ चलना मुश्किल हो जायेगा।

दा साहब अपने विचारों में, लखन हताश और जमना बहन असमंजस में चुप। पांडे माहौल की चुप्पी और भारीपन को तोड़ता है।

पांडेजी : (खाते-खाते) एक अर्ज़ है साब मेरी। (दा साहब केवल प्रश्न-वाचक दृष्टि से देखते हैं) परेलू उद्योग योजना घर-घर जाकर समझा तो दी गयी है साब, अकेले सरोहा से डेढ़-सौ फारम भरकर आये हैं, क्यों न...?

दा साहब : लोगों की प्रतिक्रिया ?

पांडेजी : कुछ लोगों के मन में बहुत उत्साह है—पर कुछ लोग ये भी कहने लगे हैं कि बातें तो कब से सुन रहे हैं, कुछ होयेगा-हवायेगा भी कि नहीं ?

दा साहब : (सोच में डूब जाते हैं) हूंऽऽ !

पांडेजी : साब ! क्यों नहीं इस मीटिंग में पहली किस्त का रुपया आप सबको अपने हाथों से दें और इस योजना का औपचारिक उद्घाटन भी करें !

दा साहब : ठीक कहते हो, रुपया जरूर पहुँचा देना चाहिए, वरना काग़जी

योजनाएँ विश्वास तोड़ देती हैं लोगों का। (विराम) दो बातों का ध्यान रखा गया है न ? एक तो इस योजना में पंचायत कहीं न आये। असन्तुष्ट हैं लोग पंचायत से।

पांडेजी : नहीं साब ! सरकार का सीधा नियंत्रण रहेगा इस योजना पर।

दा साहब : दूसरे इस योजना का अधिक-से-अधिक लाभ हरिजनों और खेत-मजदूरों को ही मिले।

पांडेजी : आप निश्चिन्त रहें। सरकार पैसा सीधा हरिजनों और खेत-मजदूरों के हाथ में देगी।

लखन : जोरावर के गले नहीं उतरेगी यह बात।

जमना बहन : जोरावर की चिन्ता तू हमारे लिए छोड़ दे।

पांडेजी : सरोहा के हालात देखते हुए सरपंच और जोरावर का बीच में आना ठीक भी नहीं है, साब !

जोरावर का प्रवेश।

जोरावर : जै रामजी की दा साहेब, जमना बहन ! (लखन, पांडेजी को देखकर) अरे सारा कुनबा ही जुटा है। वाह !

जमना बहन : आओ-आओ जोरावर, बस तुम्हारी ही कमी थी। दस-बारह दिनों से तो तुम बिलकुल आये ही नहीं। लगता है, चुनाव का सारा बोझ जैसे तुमने अपने ही ऊपर ले लिया है।

जोरावर : हम क्या बोझ लेंगे जमना बहन, दा साहब खुद बड़े समर्थ। फिर ये पाडेजी...।

दा साहब : आज इतनी सबेरे कैसे आना हुआ ? कोई खास बात ?

बहुत पैनी नजरों से जोरावर को देखते हैं।

जोरावर : मंडी से कुछ वसूली करनी थी...खाद और बीज खरीदना था, सोचा, आपसे भी मिलते चलें।

दा साहब : हूंऽऽ ! (चेहरे पर नजरें गड़ाये-गड़ाये) देख रहा हूँ, चाल ही उलट गयी है तुम्हारी तो !

जोरावर : (कुछ बौखलाकर) हम क्या किये रहे दा साहेब जो चाल उलट गयी हमारी ?

जोरावर दा साहब को ऐसे देखता है मानो भांपने की कोशिश कर रहा हो।

जमना बहन : (बात संभालते हुए) पहले इनसे मिलने आते थे और बाजार का काम भी कर लिया करते थे...आज बाजार का काम करने आये हो और इनसे भी मिलने चले आये...कहेगे नहीं...!

जोरावर : (आश्वस्त होकर) ओह ! ...क्या बतावें दा साहेब, किसान का पहला धंधा खेती।

जमना बहन : अच्छा यह बताओ, सरोहा में इस बार हवा किधर की है ?

जोरावर : अरे हवा ससुरी की क्या है, जिधर चाहे मोड़ दो।

पाडेजी : हाँ, सरोहा की हवा तो जोरावर अपनी मुट्ठी में रखते हैं, साब !

जोरावर : पर आप लोग रहने कहाँ देंगे ? (कुछ रुककर) अब आप ही सोचो दा साहेब ! इन हरिजनों के बाप-दादे हमारे बाप-दादों के सामने सिर झुकाकर रहते थे। झुके-झुके पीठ कमान की तरह टेढ़ी हो जाया करती थी, पर आप लोग इतना माथे चढ़ा रहे हो कि आज ये ससुरे आँख में आँख गाड़कर बात करते हैं। बरदास्त नहीं होता यह हमसे।

लखन : (लखन जो इतनी देर से अपने को जब्त किये बैठा है, फट पड़ता है) देख लिया दा साहब...यह है इनका रवैया हरिजनों के लिए ! आज भी ये लोग चाहते हैं कि खेत-मजदूर गुलाम बनकर पैरों में रहे इनके। पर अब ये सब ज्यादा दिन नहीं चलेगा। उनका हक उन्हें देना ही पड़ेगा।

जमना बहन : (स्थिति को संभालते हुए) तू तो ऐसे कह रहा है लखन, जैसे हक अकेले जोरावर की जेब में रखा हुआ है। (शरबत का गिलास जोरावर को थमाते हुए) लो जोरावर, यह पियो... (लखन से) क्या जानता नहीं, दा साहब की चिन्ता भी तो यही है। कुछ कदम उठाये हैं सरकार ने, कुछ और उठायेगी गरीबों को उनका हक दिलवाने के लिए।

जोरावर : जहाँ हक दिलवाये वहीं रो रही है सरकार। आये दिन हड़तालें, जलूस, तोड़-फोड़। काम कोई नहीं करना चाहता ससुरा...बस सबको हक चाहिए...और दो हक...एक दिन देखोगे कि हक-ही-हक रह जायेंगे इनके पास...और कोई काम-धाम नहीं। (शरबत का घूँट लेता है) देखो दा साब, एक बात कहे आपको, बुरा मत मानना। (क्षणिक असमंजस के बाद) आप लोगों के लिए तो ये खेत-मजदूर और हरिजन चुनाव जीतने के वास्ते एक वोट-भर हैं...पर हमारे ये मजूरे हैं। काम करते हैं हमारे खेतों में। हमारे बिना गुजारा भी नहीं इनका। एक बो सुकुलवा था, मादर...!

जमना बहन : जोरावर, फिर वही गन्दी जबान।

जोरावर : क्या करें, गाली ही निकलती है। बड़ा कानून बनाया था, अपने राज मे !...सबके कर्जे माफ...नाम काट दो बहियों में से। हजारो के नीचे आ गये हम तो, पर फिर ? हारी... बीमारी...सादी-ब्याह, मरण-मौत, वह आता था करजा देने ? जमीन पर लोट-लोटकर नाक तो हमारे सामने ही रगड़ी ससुरो ने। काम तो हमी आये। तब आता सुकुलवा...।

दा साहब : ठीक कहते हो तुम। इसीलिए मैं ऐसी स्थिति पैदा करना चाहता हूँ कि उन्हे क़र्ज़ लेने ही न पड़ें। आर्थिक रूप से स्वतंत्र होकर ही शोषण से मुक्त हो सकेंगे और समाज मे समानता का दर्जा पा सकेंगे ये लोग।

जोरावर : चार पैसे हाथ मे हो जाने से ही जात ऊँची हो जायेगी उनकी ? हमारे साथ हुक्का-पानी पीने लगेंगे ? दा साहब, ऊँच-नीच है तो रहेगी ही।

दा साहब : (सख्त आवाज में) ज़माना बदल रहा है, जोरावर...ज़माने के साथ बदलना सीखो। जो बातें आज से तीस साल पहले होनी चाहिए थी वो आज भी पूरी तरह नही हो रही हैं। दुर्भाग्य है इस देश का।

जोरावर : बदल रहा होगा जहाँ बदल रहा होगा। हमारे रहते सरोहा मे नहीं बदल सकता जमाना।

लखन : इस भरोसे मत रहना अब। बिसू को लेकर कितना तनाव है गाँव मे ! चारों तरफ़ उसके पोस्टर नही चिपक गये ?

जोरावर : बिसू ? (सारी बात को झटके से उड़ाने की कोशिश करते हुए) ओह ! उस लड़के की बात कर रहे हो ? अरे काम-धाम कुछ था नही उस हरामी के। जहर खाकर नही मरता तो भूख से मरता। पर उसमें हमारा क्या है ? (गरदन झटक देता है। फिर स्थिति की गम्भीरता को समझकर अपने को संभालते हुए) विरोधियों का ऐसी बातें करना तो समझ में आता है। पर अब आप लोग भी जदि...।

जमना बहन : इसीलिए तो अब दा साहब जा रहे हैं सरोहा। जाकर एक बार बात करेंगे तो तनाव-वनाव सब ठीक हो जायेगा।

जोरावर : (उत्साह से) आप आ रहे हैं सरोहा ? कब ? (दा साहब ध्यान नहीं देते)

पांडेजी : (चुप्पी तोड़ते हुए) कार्यक्रम में तो सबसे बाद मे था, लेकिन अब चौदह को ही आ रहे हैं।

जोरावर : (प्रसन्नता से) आओ-आओ। ऐसा स्वागत करवाते हैं आपका कि...(दा साहब पैनी दृष्टि डालते हैं) मुख्यमंत्री गाँव मे आये उससे बड़ा अउर कौन मौका होगा !

दा साहब : (हलकी-सी सख्ती के साथ) तुम मेरी योजनाओं में सहयोग दो तो ज्यादा अच्छा होगा।

जमना बहन : आप तो ऐसे कह रहे हैं जैसे जोरावर कोई पराया हो। अपने लोग सहयोग नही देंगे तो क्या बाहर के लोग आयेंगे ?...पर पहले चुनाव का बेड़ा तो पार लगे।

जोरावर : वह तो लगेगा ही...उसकी चिन्ता आप काहे करती हैं ! (उठते हुए) पाडेजी, अब आप भी पहुँचो सरोहा...मिलकर ही तैयारी करें।

पाडेजी : मैं साथ ही चल रहा हूँ। (उठते हैं)

जोरावर : यह आपने अच्छी खबर सुनायी कि आप आ रहे हो। उस सुकुलवा हरामी ने अपने किराये के लौंडों की फौज उतारकर ऐसी गुंडा-गर्दी मचवा रखी है गाँव में कि बस ! आप एक बार आओगे तो स्साले सब ठीक हो जायेंगे।...जरा अपना पल्ड़ा भी तो भारी हो। (हाथ जोड़ता है। दोनों निकल जाते हैं। दा साहब उधर ही देखते रहते हैं)

जमना बहन : आज थोड़ा बेसुरा बोल रहा था जोरावर।

दा साहब : पैसे ने अहंकार तो दिया, संस्कार नहीं। (घड़ी देखते हैं, उठते हैं)

जमना बहन : पर तुम भी इतना ही खीचो कि डोर टूटे नही।

दा साहब : राजनीति मे काफ़ी दिलचस्पी बढ़ती जा रही है तुम्हारी।

जमना बहन : (भीतर जाते-जाते हँसकर) साथ नही देना है तुम्हारा ?

जमना बहन भीतर चली जाती हैं। दा साहब उठकर लखन के पास आते हैं जो अभी भी गुस्से से भरा बैठा है। उसके कंधे पर हाथ रखकर।

दा साहब : लखन, गरीबों के लिए हमदर्दी है तुम्हारे मन मे, अच्छी बात है। पर सही बात को कहने का ढंग भी सही होना चाहिए। (एक-एक शब्द पर जोर देकर) और समय भी सही। (लखन केवल दा साहब की ओर देखता रहता है)...हमे काटकर तो नही फेंकना है जोरावर को, सुधारना है।

लखन : ये सुधरेंगे ? रवैया देखा है इनका ?

दा साहब : सदियों पुराना संस्कार है। छूटने मे समय लगेगा।

लखन : तो फिर खेत-मजदूर और हरिजनो के वोट तो...।

दा साहब : नजर हमेशा अपनी हार-जीत पर ही मत रखो, लखन ! (क्षणिक विराम) तुम्हारा आज का आवेश देखकर मुझे अच्छा नही लगा। मेरे साथ चलना है तो जबान पर लगाम और व्यवहार मे ठहराव चाहिए। समझे ? मेरे लिए राजनीति धर्मनीति से कम नही। मेरा साथ चाहते हो तो गीता का उपदेश गाँठ बाँध लो। निष्ठा से अपना कर्म किये जाओ, बस। कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचिन्...(दा साहब जाने लगते हैं, रुककर पीछे मुड़कर) पढते हो गीता या नही ?... पढा करो। चित्त को बड़ी शान्ति मिलती है। (बाहर निकलते हुए) 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचिन् मा कर्मफलहेतु भूर्मा ते सङोऽस्त्वकर्मणि'।

धीरे-धीरे अन्धकार।

सकत हमका। बिसू का अधूरा काम तो अब हम पूरा करब !
(चेहरे पर क्रोध के साथ-साथ दृढ़ संकल्प का भाव)

रुक्मा : (बिन्दा का हाथ पकड़कर याचना करते हुए) अब मुलाय देयो बिसू दादा की बातन का। नामौ न लिहौ उनका। हम तो कहित हैं ई गाँवों छोड़ देव। हमका नाही रहैका हियाँ। (आवाज़ भर्रा जाती है) साँस लेब दूभर हुई गवा है।

बिन्दा : देख रहे हो महेस बाबू इस औरत को ! जिस दिन झोंपड़ियों मे आग लगी, उस दिन इसका गुस्सा देखते। दो दिन तक तो मुंह में अन्न का दाना तक नही दिया था...लड़ती रही थी हमसे कि आकास-पाताल छानि के हम हत्यारे को काहे नही पकड़ लाते ! बिसू से जियादा तो ई हमारे पीछे पड़ी रही कि उन परमानों को लेकर हम बिसू के साथ दिल्ली काहे नही जाते ! काहे खेती-बारी अउर घर-गिरस्ती करके घर मे ही बइठे रहते है ?

रुक्मा : अब जो बोली तो मार जूता के झौर दिहयो हमका। हम हाथ जोड़ित हैं तुम्हारे...तुम आपन खेती ई करो।

महेश : रुक्मा शायद ठीक ही कह रही है, बिन्दा ! जैसे हालात हो रहे हैं, उन्हे देखकर तो तुम्हे बहुत सोच-समझकर ही क़दम उठाना चाहिए। सिर्फ़ आवेश मे किया हुआ काम...।

बिन्दा : (बात काटकर) सोचने-समझने का टैम कहाँ धरा है, महेस बाबू ! ई कोई तुम्हार थीसस लिखना थोड़े ही है जो महीने-पे-महीने लगाये जाओ। ई काम तो अब्भी होना है। (पीछे से नारों की आवाज़ आती है) ई हल्ला सुन रहे हो ? बिसू के नाम के नारे खूब उछलेंगे...पर देखना, बिसू की मौत और आगजनी सब दब के रह जायेगा चुनाव के या हुड़दंग मा। (ग़ुस्से से) लेकिन अब बिन्दा दबने नही देगा। बिसू का हत्यारा अब बच नही सकेगा हमरे हाथ से...।

रुक्मा : (उसे चुप कराते हुए) तुमका हमार सिर की कसम जो ई परपंच मा पड़ो। अरे जाय वाला तो चला गवा पर हम तो अबै जिन्दा हैं।

बिन्दा : (झटककर अलग कर देता है) चुप कर ! (रुक्मा रोने लगती है)

महेश : ज़रा धीरज से काम लो, बिन्दा ! बिसू जैसे आदमी की मौत के बाद ये हंगामा...तुम्हारा गुस्सा और दुख सब समझता हूँ

मैं। मेरा तो थोड़े ही दिनों का परिचय था बिसू के साथ।... मैं तो सोच भी नहीं सकता था कि गाँव में किसी ऐसे आदमी से मुलाकात होगी।...मुझे भी कितना दुख है उसकी मौत का! इस हादसे के बाद से तो जैसे मैं...।

बिन्दा : (व्यंग्य से) बऽस, सिरफ दुख है? तुम तो जवान आदमी हो, खून नहीं खौला तुम्हारा?

महेश : (बिन्दा के पास आकर, उसे समझाते हुए) खून खौले भी तो बताओ, क्या कर सकते हैं हम? तुम गुस्से में आकर किसी को मार भी आये तो क्या उससे समस्या हल हो जायेगी? जुर्म का जवाब जुर्म नहीं होता, बिन्दा! ...जब तक हमारी व्यवस्था में जाति-भेद है और अमीर-ग़रीब की खाई है...।

बिन्दा : (झिड़ककर) छोड़ो ई किताबी बातें, महेस बाबू! जरा बताओ, कउन मिटायेगा अमीर-गरीब का ई भेद? तुम तो डेढ़ महीने से हियाँ साईकिल पे घूम-घूमके अउर किताबें पढ़-पढ़के गाँव जानि रहे हो।...थीसस लिखोगे गाँव पे।... अइसे जाना जाता है गाँव? अरे गाँव जानना है तो जुड़ो हियाँ के लोगों से...सामिल होओ उनके दुख-दरद में! लिखो कि सरकारी रेट पे मजूरी माँगने-भर से जिन्दा आदमियों को भून के राख बना दिया। अउर जब इस जुलुम के खिलाफ किसी ने आवाज उठाये की कोसिस की तो मार दिया उसे... (गुस्से से चेहरा तमतमा जाता है और आवाज काँपने लगती है) कुत्ते की मौत! ...लिखो ई बातें थीसस मा...छपाओ! दुनिया जाने तो कि कइसे-कइसे जुलुम होत हैं गाँव बालन के साथ! (महेश चुप। चेहरे पर परेशानी का भाव, मानो बिन्दा की बातों ने भीतर तक कचोट दिया हो) बऽस! हो गये चुप! अरे तुम थीसस लिख रहे हो नौकरी पाने के लिए... बड़ा अहुदा पाने के लिए। गरीबों की चिन्ता हइये किसे?

महेश : नहीं, यह बात नहीं है बिन्दा...बात दरअसल यह है कि हमें इजाजत नहीं है कि हम गाँव की...।

बिन्दा : (व्यंग्य से) इजाजत! अरे इजाजत किसे होती है सच्चाई जानने की? बिसू को थी...हमको है...लेकिन जाननी नहीं चाहिए क्या?

रुक्मा : हाँ, नाहीं जानै का चाही, जानके का कर लिहिन बिसू दादा? कउन जुलुम-जियादती हटि गयी कि गरीबन का राजपाट मिलि

मृत बिसू का दुखी-त्रस्त बाप हीरा ।

दा साहब । मरोहा की स्थिति पर प्रकाश डालती हुई जमना बहन । पीछे खड़ा है सज्जन ।

जोरावर और दा साहब ।

वृद्ध बिन्दा को सम्भालते हुए महेश। पीछे खडी है डरी-सहमी रुक्मा।
भाषण देते हुए मुकुल बाबू। पीछे खडा है कासो।

दत्ता बाबू । भवानी नरोत्तम को शान्त क॰ ॰ा कोशिश कर रहा।

दा साहब का भाषण समाप्त होने पर जोरावर उन्हें माला पहना रहा है।

म॰ढ़ा में तहकीकात के लिए आये हुए एम० पी० सक्सेना ।
एक ओर थानेदार खड़ा है, दूसरी ओर हीरा और उसकी पत्नी ।

बिन्दा का बयान लेते हुए एम० पी० सक्सेना । एक ओर खड़ी है भयभीत रुक्मा ।

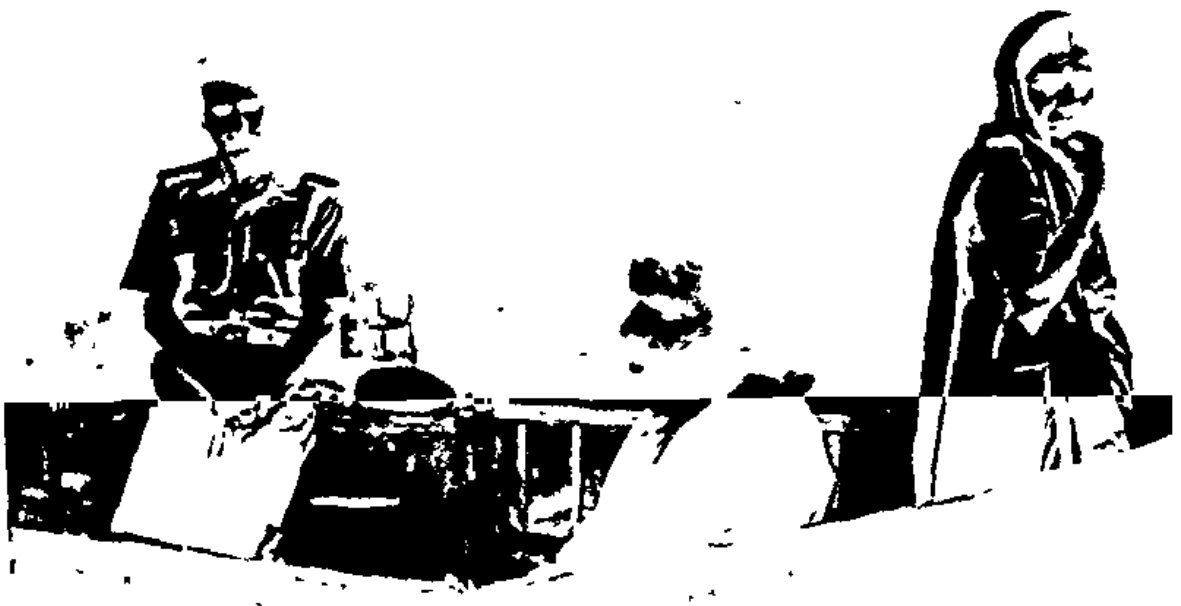

गवा ? हाँ, उनकी जिनगी जरूरै मिट्टी हुइ गयी । पर अब हम तुमका ऊ रास्ते पे न जाये देबै ।

बिन्दा : तू कउन है हमका रोकै वाली ? (पीछे से नारों की आवाज तेज हो जाती है । बिन्दा उसी दिशा में दो कदम बढ़कर फटकारते हुए) चुप करो हरामजादो । जीतेजी तो वाही का चैन नाही लिये दिहौ । अब ऊकी मऊत मुनावे आये हो ! गिद्धन की नाईं नोच रहे हैं ऊकी लहास का ।

महेश : (बिन्दा को पकड़कर) यहाँ मत चिल्लाओ इस तरह—घर चलो । (पकड़कर घसीटने लगता है । रुक्मा भी भयभीत-सी उसे पकड़ लेती है)

बिन्दा : (हिक़ारत से) तुमौ डरत हो ? जाने कउन जहर घुला हुआ है हियाँ की हवा मे कि आदमी स्साला मिट्टी का लौंदा बन के रहि जात है !

नारे लगाते हुए कार्यकर्ता मंच पर आ जाते हैं । बिन्दा झपटकर उधर बढ़ता है । महेश और रुक्मा पकड़ लेते हैं । अपने को छुड़ाते हुए ।

बिन्दा : अरे बिसू मरि गवा, ऊका मरै रहन देव ।

महेश : (खींचते हुए) चलो यहाँ से !

बिन्दा : इन हरामियो को...!

महेश बिन्दा के मुँह पर हाथ रखकर खींचता हुआ बाहर ले जाता है । रुक्मा भी जल्दी से अपनी टोकरी उठाकर डरी-सहमी निकल जाती है । जुलूस के लोग आश्चर्य से इन लोगों को देखते हैं, फिर उसी खिलवाड़ भाव से नारे लगाने लगते हैं :

कार्यकर्ता : बिसू की हत्या—

सब : जुलुम है...जुलुम है !

कार्यकर्ता : बिसू की मौत का—

सब : जवाब चाहिए, जवाब चाहिए !

मंच का एक चक्कर लगाकर बीच में खड़े हो जाते हैं । एक कार्यकर्ता भोंपू से घोषणा करता है ।

कार्यकर्ता : हरिजन भाइयो के हमदर्द दोस्त मुकुल बाबू आप लोगों की लड़ाई लड़ने आ रहे हैं । आइये, मुकुल बाबू की आवाज में आवाज मिलाकर बिसू की मौत का जवाब माँगिये । मुकुल बाबू—

सब : जिन्दाबाद !

कार्यकर्ता : हरिजन भाई—

सब : जिन्दाबाद !

गाँव वाले तमाशबीनों की तरह इर्द-गिर्द जमा हो जाते हैं। तभी इन नारों की आवाज को ढँकता हुआ दा साहब के कार्यकर्ताओं का जलूस आता है। आगे-आगे डौंडी पीटता हुआ एक कार्यकर्ता। सबके हाथों में घरेलू उद्योग योजना के पोस्टर्स हैं।

दा साहब का कार्यकर्ता : अपनी गरीबी से खुद लड़िये। घरेलू उद्योग योजना का फारम भरिये।...भाइयो, सरकार अब आपको गरीब नहीं रहने देगी। खाली समय में आप लोग घर में ही कोई छोटा-मोटा रोजगार शुरू करिये। रोजगार के लिए पैसा ?

सब : सरकार देगी !

कार्यकर्ता : काम सिखाने के लिए आदमी ?

सब : सरकार भेजेगी !

कार्यकर्ता बनाया हुआ माल ?

सब : सरकार बेचेगी !

(सब लोग मिलकर) काम और पैसा सरकार का, पर मुनाफा आपका !

कार्यकर्ता : आइये-आइये, फारम भरिये...अपनी गरीबी से खुद लड़िये। दा साहब के राज में अब कोई गरीब नहीं रहेगा। (सुकुल बाबू के कार्यकर्ता के पास से भीड़ धीरे-धीरे इधर आ जाती है) अब कोई आप पर जोर-जुलुम नहीं कर सकेगा।

सुकुल बाबू के कार्यकर्ता भाषण देने के लिए बनाये मंच पर चढ़कर माइक से बोलते हैं।

सुकुल बाबू का कार्यकर्ता : आइये सुकुल बाबू की आवाज में आवाज मिलाइये।...उनके *हाथ मजबूत बनाइये। सुकुल बाबू जिन्दाबाद...हरिजन भाई* जिन्दाबाद !

एक ओर से सुकुल बाबू और काशी का प्रवेश। साथ में 'सुकुल बाबू जिन्दाबाद' के नारे लगाती हुई भीड़। थानेदार और एक लठैत भीड़ को नियंत्रित कर रहे हैं। सुकुल बाबू सीधे मंच पर चढ़कर सबको नमस्कार करते हैं। सारी भीड़ धीरे-धीरे मंच के सामने बैठ जाती है। एक तरफ

थानेदार और दूसरी तरफ़ लठैत सबको क़ाबू में रख रहे हैं। काशी माइक पर आकर।

काशी : भाइयो, शान्त हो जाइये और जिसको जहाँ जगह मिले बैठ जाइये। आपके प्यारे नेता सुकुल बाबू अब आपसे कुछ बात करेंगे।

सुकुल बाबू माइक पर आते हैं।

सुकुल बाबू : प्यारे दोस्तो,

आपके दुख में शामिल होने के लिए आज यहाँ आया हूँ। दुख तो आप पर पहले भी पड़ा था और इससे ज्यादा बड़ा था, लेकिन मैं तब नहीं आया।...यह मत समझिये कि उस दुख ने मुझे हिलाया नहीं था।...भीतर तक दहला दिया था। लेकिन भरोसा था मुझे कि इस न्यायप्रिय सरकार के राज्य में, जिसने बड़े-बड़े वायदे किये थे आपसे...बड़ी-बड़ी उम्मीदें बँधायी थी आपको...कम-से-कम अत्याचारी को उसके जुल्म की सजा तो जरूर मिलेगी। इतने बेगुनाहों को इतनी बेरहमी से मारने वाला बच नहीं सकेगा पुलिस के चुगल से। आखिर क़ानून और पुलिस है किस मर्ज की दवा? लेकिन ताज्जुब। सजा तो दूर, किसी की तरफ़ उँगली तक न उठायी गयी। बड़ी सफ़ाई से दबा दिया सारा मामला। लेकिन फिर भी मैं खून का घूंट पीकर रह गया।

भीड़ में से एक : का बताई...हमारा दुख सुना कोई नाहीं जानत...हमार कोई नाहीं...!

लठैत : चुप करे बइठो!

सुकुल बाबू : लेकिन बिसू की हत्या के बाद चुप रहना सम्भव नहीं। क्या गुनाह था बिसू का...यही न कि वह असली मुजरिम को पकड़वाना चाहता था...न्याय चाहता था। पर न्याय के बदले मे मिली उसे मौत।

क्षणिक विराम।

: यह मौत कुछ हरिजनों की या एक बिसू की नहीं...यह आपके जिन्दा रहने के हक की मौत है। यह मत समझिये कि मैं आपको यह हक दिलवाने आया हूँ। नहीं, उसे तो आपको खुद लेना है। मेरे पास है ही क्या?

(क्षणिक विराम) गांधीजी ने क्या किया था? सदियों की गुलामी और शोषण से मुर्दा हो गये लोगों को देने के लिए

उस लाठी और लंगोटी वाले फ़क़ीर के पास था ही क्या? उसने तो बस लोगों के टूटे हुए हौसलों को जोड़ा—सोयी हुई ताकत को जगाया...बिखरे हुए लोगों को संगठित किया और अंग्रेजी राज का तख्ता पलट कर रख दिया। इसी तरह आज यदि जनता अपनी पूरी ताकत के साथ उठती है तो कोई नहीं टिक सकता उसके सामने...इन मुट्ठी-भर खेत-मालिकों की तो औकात ही क्या?

लठैत : अरे पिछले चुनाव में जौन तुम्हार तख्ता पलटे रहा, इत्ती जल्दी भूलि गवा ससुरा।

सुकुल बाबू : भूले नहीं होंगे आप कि मैंने गरीब भाइयों के कर्ज़े माफ़ करवाये थे...आर्थिक मदद पहुँचायी थी। और बदले में गाँव के अमीर किसानों और साहूकारों की दुश्मनी मोल ली। बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ी थी इस दुश्मनी की। पर मुझे मलाल नहीं ...संतोष है कि आपके लिए कुछ किया। (विराम) आज दा साहब अपने जुर्मों पर पर्दा डालने के लिए घरेलू उद्योग योजना के टुकड़े फेंक रहे हैं। आपके पैसे से ही आपको ख़रीदा जा रहा है। (दा साहब का कार्यकर्ता नारे लगा कर विरोध करता है) पर अब हम इस भुलावे में नहीं आयेंगे (विराम) सत्ताईस तारीख को हम सब मिलकर चलेंगे और जवाब माँगेंगे दा साहब से—हमें आगजनी का असली मुजरिम चाहिए...बिसू का हत्यारा चाहिए। केवल सरोहा के ही नहीं, पूरे प्रान्त के हरिजन और खेत-मजदूर चलेंगे मेरे साथ। कोई भी घर नहीं बैठेगा उस दिन। क़ानून हमें न्याय नहीं दे सकता तो हम अपनी आख़िरी साँस तक संघर्ष करेंगे। अन्याय बरदाश्त नहीं करेंगे।

दा साहब के कार्यकर्ता, लठैत एवं सुकुल बाबू के लोगों में झगड़ा हो जाता है। दा साहब और सुकुल बाबू के कार्यकर्ताओं में हाथापाई और मार-पीट। थानेदार और लठैत डंडे मार-मार कर भीड़ को तितर-बितर करते हैं। झगड़े, चीख-पुकार और भगदड़ में दृश्य समाप्त।

दृश्य : पाँच

दा साहब का कमरा। पांडेजी, दा साहब और अप्पा साहब बैठे हैं।

अप्पा साहब : हाँ-हाँ, सुना मैंने भी है कि सुकुल बाबू की मीटिंग मे कुछ गड़बड़ हुई, दंगा-फ़साद भी हुआ है। लेकिन आसपास के गांवों का दौरा करके कल रात ही लौटा हूँ। (क्षणिक विराम) सुकुल बाबू की रैली की तैयारियाँ तो बड़ी धूमधाम से हो रही हैं। फिर से सुकुल बाबू के लिए लोगों का उत्साह देखकर थोड़ा आश्चर्य हुआ, थोड़ी चिन्ता भी।

पांडेजी : दो समय का खाना और पाँच रुपये प्रति व्यक्ति तय हुआ है। बच्चों तक को दो-दो रुपये दिये जायेंगे। उत्साह उसी को लेकर है। लोगों का क्या है साब, एक दिन मज़दूरी नहीं की और पूरे कुनबे ने मौज कर ली!

दा साहब : (क्षोभ के साथ) किस घटिया स्तर पर उतर आयी है राजनीति! किराये की रैलियाँ तो सुकुल बाबू ने अपने पिछले चुनाव में भी बहुत करवायी थी, पर हुआ क्या?

अप्पा साहब : लेकिन उस समय की स्थिति और आज की स्थिति मे अन्तर नहीं लगता आपको? तब लोगों में हमारे लिए बड़ा जोश था, उत्साह था, लेकिन आज? अगर सच्चाई को नज़रअन्दाज न करें तो मानना होगा कि लोगों में काफ़ी निराशा है... असन्तोष है और विरोधी पार्टी तो इस स्थिति का पूरा-पूरा फ़ायदा उठायेगी ही।

दा साहब : विरोधी पार्टी फ़ायदा उठाये यह तो समझ में आता है—उसके लिए आदमी तैयार भी रहता है, लेकिन अगर अपने ही लोग (क्षणिक विराम) बिसू की मौत की एक निहायत ही मामूली-सी घटना को लेकर दो रात तक बड़ी उखाड़-पछाड़ वाली मीटिंग होती रही लोचन के घर...मन्त्रिमंडल गिराने तक की बात भी उठी। आप ही बताइये, इस महत्वपूर्ण

चुनाव के मौके पर अपने ही लोगों का यह रवैया कहाँ तक उचित है ? जरूरी नहीं है कि इस समय सारी पार्टी एकजुट होकर काम करे ?

अप्पा साहब : (परेशानी से) जानता हूँ, जानता हूँ। लोचन को कितना समझाता-सभालता भी रहता हूँ। लेकिन अब उसके भी अपने तर्क है।...दुर्भाग्यवश इधर कुछ ऐसी स्थितियाँ उभरकर सामने आ रही हैं जिससे लगता है, जैसे हम खेत-मालिकों को प्रश्रय दे रहे हैं, जातिवाद को बढ़ावा दे रहे है। लोचन की शिकायत ही यह है कि क्या यही थे हमारी पार्टी के उद्देश्य ?

दा साहब : (आवेशहीन ठंडे स्वर में) उद्देश्य तो शायद यह भी नहीं थे कि हम अपने व्यक्तिगत स्वार्थ और हित को पार्टी की एकता और हित से ऊपर रखेंगे। अगर सचमुच कोई शिकायत थी तो चुनाव के बाद बैठकर हम बात कर सकते थे...लेकिन ऐन इस मौके पर इन बातों को उठाने का मतलब ? बहुत साफ बात है कि अनुचित दबाव डालकर वह सौदा करना चाहता है।

अप्पा साहब : आप थोड़ा गलत समझ रहे हैं, दा साहब...लोचन के मन में स्वार्थ की बात इतनी नहीं है। वह तो...।

दा साहब : अपना भाव बढाने के लिए विद्रोही तेवर अपनाये हुए है। अभी गृह-विभाग सौंप दूं लोचन के हाथ मे तो सारे विरोध शान्त हो जायेंगे।

अप्पा साहब : देखिये दा साहब, मैंने तो आपको तभी कहा था कि गृह-विभाग अपने हाथ मे रखकर आप कुछ लोगों की नाराजगी मोल लेंगे। दो-तीन लोगों की नजर भी लगी हुई है गृह-विभाग पर, लेकिन लोचन उन लोगों में से नहीं है।...गरीब तबके के लिए सचमुच उसके मन मे बहुत तडप है।

दा साहब : (हलके-से व्यंग्य के साथ) वित्तमंत्री चौधरी भी तो साथी हैं लोचन के...दायें हाथ ही बने हुए हैं आजकल तो। उनके मन मे भी बहुत तड़प होगी इस तबके के लिए और इसीलिए शायद घरेलू उद्योग योजना के लिए पैसा देने मे उन्हें आपत्ति हो रही थी !

अप्पा साहब : चौधरी तो लखन को खड़ा करने से नाराज है। आपका विशेष आग्रह था, इसलिए मैं तो खैर मान गया, पर कई लोगों को इस बात की शिकायत है कि सुकुल बाबू के मुकाबले में हमारी

पार्टी की तरफ से भी किसी महत्वपूर्ण व्यक्ति को खड़ा करना चाहिए था जिसका कोई राजनैतिक कैरियर रहा हो, कोई स्टैंडिंग हो।

दा साहब : और सबसे महत्वपूर्ण आदमी शायद चौधरी का अपना आदमी था। (क्षणिक विराम) लखन ईमानदार तो है, उसमे निष्ठा तो है जो इन राजनैतिक कैरियर और स्टैंडिंग वालो मे देखने को भी नही मिलती आज। (क्षोभ और वितृष्णा के साथ) इन दस महीनों मे जो आचरण देखा है—जैसी लिप्सा और पद-लोलुपता देखी है...!

अप्पा साहब : आप सोचते है, मुझे कम तकलीफ है इन बातों की ? लेकिन जहाँ दस लोग है तो निश्चित समझिये कि उनके दस तरह के मन होगे, दस तरह की आकांक्षाएँ होंगी...दस तरह के असन्तोष भी होगे और हमे सबको साथ लेकर चलना है... मजबूरी है यह हमारी। उन सबकी सहमति और सन्तोष में ही अस्तित्व है हमारा।...इसीलिए कहता हूँ दा साहब कि जहाँ तक सम्भव हो हम अधिक-से-अधिक लोगो को सन्तुष्ट करने की कोशिश करें।

दा साहब : लेकिन सन्तोष यदि सौदेबाजी पर टिका हो तो ?

अप्पा साहब : नही दा साहब, बात सिर्फ़ सौदेबाजी की नही है। दरअसल उनका असन्तोष टिका है जनता के असन्तोष पर, जनता में उनकी बिगड़ती इमेज पर। आखिर वोट तो जनता से ही लेने हैं। (क्षणिक विराम) अब इस बिसू वाली बात को ही लीजिए, कितना तनाव है लोगो मे...बहुत जरूरी है कि उन्हें इस समय सन्तुष्ट किया जाये।

पांडेजी : लेकिन साब, इस बार तो संयोग से मैं वहीं था। किसी तरह की कोई ढील हुई ही नही। तुरन्त सारे बयान हुए और मामला डी० आई० जी० के हाथ मे सौंप दिया गया कि वो खुद रिपोर्ट तैयार करें।

अप्पा साहब : लेकिन डी० आई० जी० अपनी रिपोर्ट तो थानेदार के लिये हुए बयानों के आधार पर ही करेंगे,...लोगों की तकलीफ़ ही यह है कि डर के मारे थानेदार के सामने किसी ने कुछ कहा ही नही...। (रत्तो का प्रवेश)

रत्तो : दत्ता बाबू आये हैं, साब !

दा साहब : बिठाओ उन्हें। (रत्तो का प्रस्थान)

अप्पा साहब : मैं तो समझता हूँ दा साहब कि इस घटना से हमें भी एक मौका मिल रहा है अपनी इमेज सुधारने का...जनता की याददाश्त बहुत छोटी होती है। इस बार सन्तुष्ट हो गये तो आगजनी का घाव भी भर जायेगा।...और पार्टी के भीतर जो लोग इमेज को लेकर परेशान हैं, उन्हें भी शान्त किया जा सकेगा। इस मौके का पूरा-पूरा फ़ायदा उठाना चाहिए हमे भी।

दा साहब : (किसी गहरे सोच में से उबरते हुए) हूंऽऽ! आप पार्टी के लोगो को सभालने की कोशिश करिये, अप्पा साहब! बहुत जरूरी है इस समय कि हम आपसी मतभेद भुलाकर अपनी सारी शक्ति इस चुनाव पर ही केन्द्रित कर दें।

अप्पा साहब : अच्छा तो इस समय मैं चलूं। और लोगों से भी मिलना है। इस विषय में मैं आपसे जल्दी ही बात करूंगा।

दा साहब : (उठकर) कल फ़ोन करके समय तय कर लूंगा और मैं खुद हाजिर होऊँगा। (दा साहब साथ-साथ चलने लगते हैं, अप्पा साहब रोकते हैं—'बस-बस'। पांडेजी गाड़ी तक छोड़ने के लिए साथ-साथ जाते हैं। दा साहब कुछ देर सोचते रहते हैं, फिर फ़ोन उठाकर रत्तो से)

: दत्ता बाबू को भेजो...और देखो, पाँच-सात मिनट में डी० आई० जी० सिन्हा से मेरी बात करवा देना।

दत्ता बाबू का प्रवेश।

दत्ता बाबू : नमस्कार, दा साहब!

दा साहब : (चेहरे का भाव बदल गया है। हलके-फुलके ढंग से) आइये दत्ता बाबू, आइये। पर इस समय कैसे?

दत्ता बाबू : (सकपकाकर) जी वो आपने याद फरमाया था, पांडेजी ने...।

दा साहब : हाँ भाई हाँ, मैंने ही मिलने के लिए बुलाया था। एक बार समय माँगा था आपने इंटरव्यू के लिए, दे नही पाया था। समय के अभाव की बात तो अपनी जगह थी ही, पर मैं चाहता भी नही था।

दत्ता बाबू : (भौंचक्क भाव से) जीऽऽऽ?

दा साहब : उस समय कहने को था ही क्या मेरे पास? मैं ये करूंगा, वो करूंगा, मेरे शासन-काल मे ये होगा वो होगा...। पर ये गा...गे...गी वाली भाषा मुझसे बोली नहीं जाती। अरे भई, पहले कुछ कर लो। फिर उस पर बात करो। आलोचना करने को

कहो...खुलकर।

दत्ता बाबू : (आश्वस्त होकर)...तो फिर आप सुविधा से समय दें या अभी...?

दा साहब : बहुत जरूरी है इंटरव्यू ?

दत्ता बाबू : जी, मैं तो सोचता हूँ।

दा साहब : अपने दूसरे कर्तव्यो के बारे मे सोचें तो ज्यादा बेहतर नही होगा, दत्ता बाबू ? मत्रियो के इंटरव्यू छापने से कही महत्व-पूर्ण भूमिका होती है पत्रकारो की...विशेषकर प्रजातंत्र में। (क्षणिक विराम) यदि उसे सही ढग से निभाया जाये तो।

दत्ता बाबू : जी...जी, ये तो बिलकुल सही फ़रमाया आपने।

दा साहब : देखिये, लोगो ने भरोसा करके कुछ जिम्मेदारियां सौपी हैं... चाहता हूँ, उन्हें पूरा करूँ। लेकिन सहयोग और मार्ग-दर्शन चाहिए बुद्धिजीवियो से।

दत्ता बाबू : (गद्गद भाव से) अरे दा साहब, हुकुम कीजिये आप !

दा साहब : हुकुम ! मेरे हुकुम पर चलकर वजूद रख सकेंगे आप अपना ? (दत्ता बाबू सिटपिटा जाते हैं) खैर छोड़िये। लेकिन आप लोगों का सहयोग मांगूं, इससे पहले जरूरी है कि आप लोगो की परेशानियां जानूं। (क्षणिक विराम) अब किसी तरह का कोई अंकुश तो महसूस नही होता, कोई दबाव ?

दत्ता बाबू : जी नही, बिलकुल नही। इस बात के लिए तो बहुत शुक्रगुजार हैं हम आपके...!

दा साहब : भूल जाइये इस भाषा को। अखबारो की स्वतत्रता पहली शर्त है प्रजातत्र की।

दत्ता बाबू : बिलकुल। वह तो है ही।

दा साहब : खुलकर टिप्पणी कीजिये। हम गलती करें तो खुलकर निन्दा भी कीजिये। भई, मैं तो कबीर के दोहे का कायल हूँ— 'निन्दक नियरे राखिये'...निन्दक हमेशा ज्यादा हितैषी होता है। लेकिन स्वभाव है आदमी का, प्रशंसा ही अच्छी लगती है उसे। खैर, कोई परेशानी ?

दत्ता बाबू : (हिचकिचाते हुए) जी परेशानियां तो हैं लेकिन...।

दा साहब : लेकिन...कहिये...कहिये...!

दत्ता बाबू : देखिये दा साहब...आप तो जानते ही हैं...मेरा मतलब है कि सही भूमिका निभाने की भी कुछ अनिवार्यताएं होती हैं।

दा साहब : जैसे ?

दत्ता बाबू : जैसे...अब अखबारों की ही बात लीजिये। यह सही है कि अखबारों की भूमिका बहुत अहम होती है, जिसको निभाने के लिए पूरी ईमानदारी और निष्ठा जरूरी है। लेकिन यह तो आप भी मानेंगे कि अखबार से हम लोगों की निष्ठा ही नहीं, आजीविका भी जुड़ी होती है। यह निष्ठा बनी रहे, इसका काफी उत्तरदायित्व सरकार पर भी है।

दा साहब : तो आप चाहते हैं कि सारे अखबार सरकार चलाये ?

दत्ता बाबू : जी...नहीं। चलाये नहीं, लेकिन इतनी सुविधा तो दे कि वो चलते रहें।

दा साहब : सुविधा ?

दत्ता बाबू : दा साहब, आप नहीं जानते कि बिना सरकारी विज्ञापनों और कागज के कोटे के 'मशाल' को अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए कितनी जद्दोजहद करनी पड़ती है !

दा साहब : पर मैंने तो कागज और विज्ञापनों पर से सारी पाबन्दियाँ हटा दी थी। फिर आपको कोटा क्यों नहीं मिल रहा ?

दत्ता बाबू : जी, बात ये है दा साहब कि बीच के लोग, फाइलबाजी, और भी बहुत-से चक्कर होते हैं। अब आप तो जानते ही हैं...।

दा साहब : ओह ! (सोच में पड़ जाते हैं) इसीलिए चाहता हूँ कि जब भी समय मिले स्वयं लोगों से मिलूँ, उनकी परेशानियाँ जानूँ। बीच का यह तंत्र...।

फ़ोन का बजर बजता है। दा साहब फ़ोन उठाते हैं।

: डी० आई० जी० ? अच्छा दो। हाँ, सिन्हा कहिये...सरोहा की रिपोर्ट तैयार हो गयी ?...अच्छी तरह छानबीन करके खूब गौर से देख लिया है न सारे मामले को ?...सारे बयान और प्रमाण इसी नतीजे पर पहुँचाते है ?...ठीक...(कुछ सोचते हुए) अच्छा देखिये, आप इस केस की फ़ाइल लेकर अभी मेरे पास आइये और साथ मे किसी ऐसे अफ़सर को लेकर आइये जो गाँव वालों का विश्वास जीत सके, उन्हें सन्तुष्ट कर सके...आप आइये तो...।

दा साहब सोच में पड़ जाते हैं, उनकी आँखें शून्य में टँग जाती है।

: क्यों दत्ता बाबू, आपका क्या खयाल है सरोहा वाली इस घटना के बारे में ?

दत्ता बाबू : वो बिसेसर नाम के किसी नौजवान की हत्या का मामला...!

दा साहब : हत्या का मामला ? (चुभती नज़र से देखकर) हत्या के प्रमाण मिल गये आपको ?

दत्ता बाबू : जी नही, वो वहाँ के लोग...।

दा साहब : वहाँ के लोग नहीं दत्ता साहब, विरोधी पार्टी के लोग। इसी समझ के साथ निभायेंगे आप अपनी महत्वपूर्ण भूमिका ?

दत्ता बाबू : जी वो हमारा रिपोर्टर...।

दा साहब : सड़क पर बेबुनियाद अफ़वाह फैलाने वाले और एक ज़िम्मेदार पत्रकार मे बहुत अन्तर होना चाहिए, दत्ता बाबू ! डी०आई०जी० की रिपोर्ट से साफ़ ज़ाहिर है कि लडके ने आत्महत्या की, लेकिन विरोधी पार्टी के लोग इस मामूली-सी घटना को हथकडे की तरह इस्तेमाल कर रहे हैं। (विराम। क्षोभ के साथ) ज़रा से स्वार्थ के लिए लोगों की शान्ति और सद्भावना के साथ ऐसा खिलवाड़ !

दत्ता बाबू : (संकोच से) जी, बहुत अनुचित है ये...।

दा साहब : पर कौन उँगली उठाता है इस अनुचित पर ? किसमे रह गया है ये नैतिक बोध ? (विराम) दत्ता बाबू, इस जर्जर सामाजिक ढाँचे को बदलने के लिए समाज के हर वर्ग का योगदान आवश्यक है। अकेली सरकार कुछ नही कर सकती। अब यही देखिये, हमने घरेलू उद्योग योजना जैसे कार्यक्रम शुरू किये हैं। लेकिन इन्हें लोगों तक पहुँचाने, लोगों को इनका महत्व समझाने तथा इनके लिए वातावरण तैयार करने का काम आप लोगो का है। लीजिए यह ज़िम्मेदारी...!

दत्ता बाबू : जी, ये तो फ़र्ज़ है हमारा...।

दा साहब : केवल कहने से नही होता दत्ता बाबू, मन में बड़ा गहरा लगाव होना चाहिए गरीब तबक़े के लिए। वो आज है किसमे ? नेता इस तबके की बात करता है सिर्फ चुनाव जीतने के लिए, आप इसकी खबरें छापते है सिर्फ अपने अखबार की बिक्री बढ़ाने के लिए।

दत्ता बाबू : जी...? (सिटपिटा जाते हैं)

दा साहब : पढे है मैंने आपके अखबार के कुछ अंक। इतना सनसनीखेज और चटपटा होता है गरीबों का दुख, उनकी तकलीफ ?

दत्ता बाबू : नही...नही...जी वो...।

दा साहब : जो हुआ उसकी सफाई नही माँग रहा। बस इतना याद रखिये कि स्वतंत्रता का अर्थ मनमानी क़तई नही होता। हमे

स्वतंत्रता ही नहीं, जिम्मेदारियाँ भी मिली हैं।

कहते हुए दा साहब पास रखी एक फ़ाइल खींच लेते हैं। दत्ता बाबू इसे अपने लिए उठने का संकेत समझकर उठते हुए।

दत्ता बाबू : अच्छा...जी...तो फिर मुझे आज्ञा दें...!

दा साहब : चलेंगे ? अच्छा चलिये। (दत्ता जाने लगता है, दा साहब का व्यस्त स्वर सुनायी देता है) वो कागज वगैरह की कुछ परेशानियाँ बता रहे थे आप...रत्ती से बात कर लीजिये।

दत्ता जैसे हर्ष और कृतज्ञता से गूंगा हो गया है।

दत्ता बाबू : बहुत-बहुत शुक्रिया दा साहब, बहुत-बहुत शुक्रिया ! (जाने लगता है तो दा साहब फिर टोक देते हैं)

दा साहब : लेकिन आया कीजिये कभी-कभी। आपका और हमारा संवाद बना रहना चाहिए। आप दर्पण हैं हमारे, कुछ धुंधले अवश्य हैं, लेकिन...बुरा मत मानियेगा। क्या करूँ, अपने को रोक नहीं पाता। बुद्धिजीवियों से बहुत ज्यादा अपेक्षा करता हूँ। शायद...। (दत्ता बाहर रत्ती के पास जाता है। सिन्हा और सक्सेना आते दिखायी देते हैं)

दत्ता बाबू : (आश्चर्य से) वाह सिन्हा साहब, कमाल ! अभी फोन पहुँचा और अभी आप दोनों हाजिर।

सिन्हा : (मुसकराकर) प्रॉम्प्टनेस दाई नेम इज पुलिस।

दत्ता बाबू : हाँ, आज तो आप जरूर कह सकते है।...वैसे इस बार सरोहा वाले मामले में बड़ी मुस्तैदी दिखायी आप लोगों ने। चट तहकीकात और पट रिपोर्ट।

सिन्हा : हमसे ज्यादा मुस्तैदी तो आपने दिखा दी। हमारी रिपोर्ट तो आयी भी नहीं और आपने छाप दिया 'रहस्यात्मक हत्या'।

दत्ता बाबू : बस, बस, बड़ी गलती हो गयी इस बार...आपकी रिपोर्ट कब मिलेगी ?

सिन्हा : कल ले लीजिये। (चेहरा जरा पास लाकर) और जाकर आत्महत्या करिये अब ! (दोनों मुसकराते हैं)

सक्सेना दोनों की बातें सुनता है, चेहरे पर नासमझी का भाव...पर जैसे कुछ समझने की कोशिश कर रहा है। रत्ती दोनों को भीतर जाने के लिए कहता है। दोनों दा साहब के कमरे में सेल्यूट मारते हैं। फ़ाइल में डूबे हुए दा साहब क्षणांश के लिए आँख

उठाकर अभिवादन स्वीकार करते हैं। हाथ के इशारे से बैठने को कहते हैं। अपनी फ़ाइल पूरी करके एक ओर सरकाते हैं।

सिन्हा : (फ़ाइल सामने करके) सर, ये फ़ाइल है और ये एस० पी० सक्सेना। (सक्सेना एक बार फिर से सेल्यूट मारता है, दा साहब ऊपर से नीचे तक उसका मुआयना करते हैं)

दा साहब : (फ़ाइल को अपनी तरफ़ खींचकर) क्या कहती है आपकी रिपोर्ट ?

सिन्हा : सर, इट्स ए क्लीयर केस ऑफ सुसाइड।

दा साहब : सारे बयान और प्रमाण इसी नतीजे पर पहुँचाते हैं ? किसी तरह का कोई सन्देह तो नहीं ?

सिन्हा : नो सर ! यह तो बहुत ही सीधा केस है...नो कॉम्प्लीकेशन।

दा साहब : तब फिर इसको लेकर सरोहा मे इतना तनाव क्यों ? गांव मे इस तरह की चर्चा है कि पुलिस के डर से पूरे बयान नही दिये लोगों ने। क्या यह सच है ?

सिन्हा : नो सर...बिलकुल नही...ये तो...।

दा साहब : पुलिस के सामने यदि जनता डरती है तो शर्म की बात है यह, पुलिस के लिए भी और मेरे अपने लिए भी।

सिन्हा : लेकिन सर, ऐसी कोई बात है ही नही...सबके बयान हैं इस फाइल में...आप तो जानते है सर, चुनाव के मौके पर इस तरह की बातें फैलाकर विरोधी पार्टी के लोग बिला वजह भड़का रहे हैं लोगो को...।

दा साहब : तो हमे उन्हें सन्तुष्ट करना चाहिए। (सक्सेना को देखकर) मिस्टर सक्सेना, मैं चाहता हूँ कि आप सरोहा जाकर एक बार फिर से तहकीक़ात करें इस मामले की।

सिन्हा : (आश्चर्य और परेशानी से) फिर से तहकीक़ात ? लेकिन सर, इसकी कोई जरूरत ही नही। बहुत ध्यान और मेहनत से रिपोर्ट तैयार की है, सर, मैंने...इसमें शक-शुबह की कोई गुंजाइश ही नही। आप एक बार देखेंगे सर, तो आपके सारे सन्देह दूर हो जायेंगे।

दा साहब : मुझे किसी तरह का कोई सन्देह नही है, मिस्टर आपकी मेहनत में, न आपकी रिपोर्ट मे। लेकिन के मन मे इस तरह की भावना है तो हमें, उसे भी (सिन्हा के चेहरे पर अप्रसन्नता का भाव) दे

सक्सेना, एक बात का ध्यान रखिये कि गाँव में किसी के साथ, किसी तरह की सख्ती न हो। इस तरह पेश आइये कि हिम्मत और हौसला बढ़े लोगों का, वे बिना डर और झिझक के अपनी बात कहें।

सक्सेना : यस सर !

दा साहब : (एक-एक शब्द पर जोर देकर) हमें विश्वास जीतना है लोगों का और इसके लिए जरूरी है कि आप अपना आतंक जमाने वाला पुलिसी रवैया यहीं छोड़कर जायें।

सिन्हा : आप चिन्ता न करें, सर...ही इज द राइट पर्सन, सर !

दा साहब : यह तो इनका काम बतायेगा।

सक्सेना : आप निश्चिन्त रहिये सर, पूरी कोशिश करूँगा कि आपको सन्तुष्ट कर सकूँ।

दा साहब : मुझे नहीं, वहाँ के लोगों को।

फोन का बजर बजता है, दा साहब उठाते हैं। उधर से रत्तो—'आपकी मीटिंग का समय हो रहा है, साब'। फ़ोन रखकर सक्सेना से।

: चौदह तारीख को मैं सरोहा जा रहा हूँ। वहाँ कहकर आऊँगा लोगों से। उसके दूसरे दिन से ही आप अपना काम शुरू कर दीजिये।...लोगों को किसी तरह की शिकायत का मौक़ा नहीं मिलना चाहिए।

उठते हैं, दोनों सेल्यूट ठोकते हैं। दा साहब एक क़दम आगे बढ़कर, पीछे मुड़कर।

: और देखिये, यों तो गाँव वाले बड़े सीधे और सरल होते हैं, पर मन में ज़हर भर दिया जाये तो खतरनाक भी हो जाते हैं कभी-कभी। सावधान रहिये।

भीतर जाने वाले दरवाजे से चले जाते हैं।

सिन्हा : (हलकी-सी परेशानी) यह फिर से तहकीक़ात ! (सक्सेना से) फ़ाइल कल मिल जायेगी...वैसे कोई खास बात नहीं। चार साल तक जेल काटकर आया था यह लड़का, तब से बेकार। गाँव के लोग इसे आवारा और अनडिज़ायरेबल एलिमेंट समझते थे...बला। जेल जाने से पहले कुछ प्रेम-वेम का चक्कर भी था। लौटकर देखा, लड़की की शादी हो गयी। बेकारी...मुखमरी...और प्रेम में निराशा...सिनिक हो गया था और बस। (दोनों कंधे झटक देता है) ए व्हेरी सिम्पल केस।

सक्सेना : मैं पूरी कोशिश करूंगा सर, कि मामले की तह तक जाऊँ और...।

सिन्हा : (बात काटकर) रिपोर्ट तैयार है, सक्सेना ! तुम्हें सिर्फ वहाँ के लोगों का विश्वास जीतना है।

सक्सेना : (चेहरे पर असन्तोष और दुविधा का भाव) लेकिन सर, यदि...।

सिन्हा : (पास आकर अपनेपन से कंधा थपथपाते हुए) हमेशा की तरह चीजों को उलझाओ मत, सक्सेना ! दोस्त की हैसियत से कह रहा हूँ। दा साहब ने बुलाकर काम सौंपा है। डोन्ट मिस दिस औपरच्युनिटी। चलो !

सिन्हा दो क़दम आगे बढ़ जाता है। परेशानी और असमंजस में डूबा सक्सेना वहीं खड़ा रहता है। सिन्हा मुड़कर पीछे देखता है तो सक्सेना एकाएक जैसे सचेत होता है और सिन्हा के पीछे-पीछे चल देता है। अन्धकार।

दृश्य : छह

'मशाल' का दफ़्तर। चपरासीनुमा लड़का फ़ाइलें जमा रहा है। कुछ दूर पर बिन्दा और महेश बैठे हैं। दत्ता बाबू हड़बड़ाये-से आते हैं। उनके चेहरे पर प्रसन्नता छलकी पड़ रही है।

दत्ता बाबू : भवानी ! (लड़के से) भवानी कहाँ चले गये ?

लड़का : आपको नहीं मिले ? अरे, अभी-अभी तो नीचे उतरे।

दत्ता बाबू : जा, तुरन्त दौड़कर बुला...कहना, बहुत ज़रूरी काम है।

लड़का : (बिन्दा और महेश की ओर इशारा करके) ये दोनों भी बहुत देर से बैठे हैं आपकी इन्तज़ार में।

दोनों खड़े हो जाते हैं।

दत्ता बाबू : तू दौड़ न...भवानी कहीं निकल न जाये...साथ ही पकड़ लाना। (लड़का दौड़ जाता है। दोनों की ओर देखकर) आप लोगों की तारीफ़ ?

महेश : (ज़रा-सा आगे बढ़कर नमस्ते करता है) मैं हूँ महेश शर्मा और ये बिन्देश्वरी प्रसाद। हम लोग सरोहा से आये हैं। कुछ बहुत ज़रूरी...।

दत्ता बाबू : (रुखाई से) लेकिन यह तो कोई समय नहीं है आने का। कल दफ़्तर के समय आइये।

बिन्दा का चेहरा तमतमा जाता है।

महेश : आये तो हम समय से ही थे, लेकिन आप थे नहीं इसलिए...।

दत्ता बाबू : जहाँ तक मेरा ख़याल है, आपसे कोई अपाइंटमेंट तो था नहीं मेरा जो मैं आपको यहाँ मिलता ही। वैसे भी कुछ बहुत ही ज़रूरी काम में व्यस्त हूँ मैं आज।

मेज पर कुछ काग़ज़ उलटने-पलटने लगते हैं।

महेश : (हलके-से तैश में आकर) नरोत्तम बाबू ने कहा था कि आज ही जाकर आपसे मिलें...हमने सोचा, उन्होंने आपसे बात कर ली होगी।

लोग बातो की तह तक जायें और असलियत को सबके सामने लायें।

दत्ता बाबू : (बिना आदेश के ठंडे, लेकिन दृढ़ स्वर में) मिस्टर...आप लोग नही समझते हैं, चुनाव के कारण इन दिनों सरोहा अफवाहो का केन्द्र बना हुआ है...छोटी-छोटी बातों को तूल दिया जाता है...दिन में कम-से-कम दस लोग आते हैं यहाँ एक-से-एक सनसनीखेज खबरें लेकर...अगर इस तरह 'मशाल' सबको छापने लगे तो हो गया, आखिर 'मशाल' एक जिम्मेदार अखबार है...। (भवानी इसी संवाद के बीच आकर खड़ा हो जाता है)

भवानी : (माहौल को सूंघते हुए, आश्चर्य और जिज्ञासा से) बात क्या है ?

दत्ता बाबू : 'मशाल' मे कुछ छपवाना चाहते हैं।

बिन्दा : हम नही छपवाना चाहते...आपका वो आदमी पीछे पडा था छपाने के लिए।

दत्ता बाबू : (बात को समाप्त करने के इरादे से—महेश को) ठीक है आप जो लाये हैं, रख जाइये—अगर कोई वजनदार और विश्वसनीय बात हुई तो हम छाप देंगे...परसो आकर मिल लीजिए।

बिन्दा : (गुस्से और हिकारत से) जानते हैं इसकी कीमत ? एक आदमी ने अपनी जान दी है, इसके खातिर...चलो महेस बाबू ! ये दो कौडी के सम्पादक क्या समझेंगे ? चलो ! (महेश को घसीटता हुआ ले जाता है। महेश भी गुस्से से देखता हुआ निकल जाता है)

भवानी : (जो कुछ भी नहीं समझ पा रहा है, बेहद आश्चर्य से) चक्कर क्या है ? कौन थे ये लोग...बडी बदतमीजी से बोल रहा था।

दत्ता बाबू : चक्कर है तुम्हारे नरोत्तम का...(बुदबुदाते हुए) और कुछ नही तो इन्ही को यहाँ भेज दिया।

भवानी : छपवाना क्या चाहते थे ?

दत्ता बाबू : कहने लगे कि आगजनी के प्रमाण हैं हमारे पास। ऐसे आदमियो की किसी बात का विश्वास किया जा सकता है ? देखा नही, एक तो शकल से ही गुडा लगता था।

भवानी : (जैसे अभी भी स्थिति समझ में नहीं आ रही हो) लेकिन नरोत्तम ने भेजा था तो जरूर कोई बात होगी—आपको एक बार देखना तो चाहिए था, कम-से-कम।

दत्ता बाबू : जवाब नहीं सुना जब कहा कि रख जाओ कागज़ ! ...नरोत्तम को आदमी की पहचान है कोई ? ...समझता नहीं कि चुनाव के दिनों में कितना सावधान और सतर्क रहने की जरूरत है ...हुंह ! (स्वर बदलकर) और तुम कहाँ चले गये थे ? कह नहीं गया था कि मैं आऊँ तब तक ठहरना यहीं ?

भवानी : आखिरी फ़र्मा ओ० के० करके मशीन पर चढवाने के बाद भी काफ़ी देर तक इन्तज़ार किया आपका...फिर कुछ काम था तो...।

दत्ता बाबू : आखिरी पेज भी चढवा दिया ! (ज़ोर से घंटी मारता है। लड़का आता है) जाकर मशीन रुकवा दे एकदम ! (लेकिन कहने के साथ ही दत्ता खुद ही भीतर चले जाते हैं)

भवानी : (आश्चर्य से) मशीन रुकवा दे...बात क्या हो गयी ? (कुछ सोचते हुए) कहीं दा साहब ने अखबार बन्द करने को कह दिया क्या ?

दत्ता भीतर मशीन रुकवाकर आते हैं। भवानी के चेहरे का भौंचक-भाव देखकर हँसने लगते हैं। भवानी हतप्रभ-सा उन्हें देखने लगता है।

दत्ता बाबू : देखो भवानी, आर्थिक संकट के कारण हम अकसर बहुत घटिया स्तर की चीजें छापते रहे हैं...क्या करते, मजबूरी थी हमारी। लेकिन आज दा साहब की इस मुलाकात से काफी हद तक आर्थिक समस्या सुलझाने का इन्तज़ाम कर आया हूँ।

भवानी : वो कैसे ? दा साहब ने कोई हुंडी थमा दी है क्या ?

दत्ता बाबू : अखबार वाले को काग़ज़ का डबल कोटा मिल जाये तो हुंडी ही समझो।

भवानी : (जैसे विश्वास न हो रहा हो) काग़ज़ का कोटा, वह भी डबल !

दत्ता बाबू : चार विज्ञापनों का वायदा और चार का ही आश्वासन...और मुख्यमंत्री के पी० ए० का आश्वासन, यानी पक्का ही समझो इन्हें भी...।

भवानी : (गद्गद भाव से) यह सब करवा लिया आपने ? मुझे तो विश्वास ही नहीं हो रहा।

दत्ता बाबू : और नहीं तो आधे घंटे में वहाँ क्या झख मार रहा था ! (दोनों हँसते हैं। स्वर में गर्व और सन्तोष भरकर) और सुनो, दा साहब मुझे प्रजातंत्र में अखबारों की महत्वपूर्ण

भूमिका समझाने लगे...मैं भी सुनता रहा। और ज्यों ही मौका मिला मैं झपट पड़ा दा साहब के ऊपर। साफ़ कह दिया—भूमिका क्या निभायें दा साहब, न साधन, न सुविधाएँ...और बस, उधर से ज़रा-सा संकेत मिला कि तुरन्त उनके पी० ए० और पाडेजी से मिल-मिलाकर सारा मामला फ़िट कर लिया। देखते जाओ, एक महीने के भीतर-भीतर 'मशाल' को प्रान्त के स्कूल-कॉलेजों के लिए अनिवार्य करवा लूंगा।

भवानी : मतलब, काफी ढंग के आदमी निकले दा साहब!

दत्ता बाबू : वह तो ढंग के निकले, लेकिन अब 'मशाल' को भी ढंग से निकालना होगा—मसाले वाले पुलाव एकदम बन्द। अधिक ज़िम्मेदार और गम्भीर रूप देना होगा अब इसे। सबसे पहले तो इसी अंक का काया-कल्प करना होगा।

भवानी : लेकिन इस अंक में तो ऐसी कोई बात नहीं गयी है...बिसू की हत्या को लेकर काफी अच्छी सामग्री दी है हमने।

दत्ता बाबू : हत्या! ...तुम लोगों की इस जल्दबाज़ी के कारण ही तो हमेशा परेशान रहता हूँ मैं। अब ये दो टके की घटना...परिशिष्ट निकालने को मजबूर किया मुझे...और जानते हो, असलियत क्या है? ...आत्महत्या की है लड़के ने।

भवानी : आत्महत्या?

दत्ता बाबू : हाँ, आत्महत्या।

भवानी : आपको कैसे मालूम? ...दा साहब ने बताया? (स्वर में व्यंग्य का हलका-सा पुट उभर आता है) कहीं इसीलिए तो ये...?

दत्ता बाबू : दा साहब क्या बतायेंगे! वो तो मैं वहाँ से निकल रहा था तभी डी० आई० जी० सिन्हा से भेंट हो गयी। मुझे फटकारा भी उन्होंने कि रिपोर्ट आने के पहले ही हत्या क्यों छाप दिया! जबकि इट्स ए क्लीयर केस ऑफ़ सुसाइड।...अब फ्रंट पेज और सम्पादकीय दोनों बदलने पड़ेंगे।

भवानी : ठीक है, आप चिन्ता क्यों करते हैं? रिपोर्ट आने दीजिये—बस कल का सारा दिन और सारी रात लगानी पड़ेगी, हत्या को आत्महत्या करने के लिए। (हँसता है)

दत्ता बाबू : सोचता हूँ, दो विशेषांक भी प्लान करें—एक चुनाव को लेकर और दूसरा घरेलू उद्योग योजना को लेकर।

नरोत्तम का प्रवेश। गुस्से में जैसे काँप-सा रहा है। दरवाज़े पर से ही।

नरोत्तम : बिन्दा और महेश को आपने अपमानित करके निकाल दिया... कितनी मुश्किल से तैयार किया था मैंने उन्हें यहाँ आने के लिए !

भवानी : लेकिन नरोत्तम, ऐसे बेहूदे आदमी को तुमने भेजा ही क्यो...?

नरोत्तम : (उसी तरह गुस्से से) जानते हैं, कितने महत्वपूर्ण कागज़ात थे उनके पास ? आगजनी के प्रमाण ! छाप देते तो नौ-नौ आदमियों को जलाने वाला हत्यारा उजागर हो जाता...फिर सरकार भी नहीं दबा सकती थी मामले को। कितना बड़ा काम होता 'मशाल' के द्वारा—लेकिन आप लोगों के लिए अहमियत रखते हैं मंत्रियों के प्रेम-प्रसंग—कौन किसके साथ सोया ...किसके साथ बलात्कार किया...!

भवानी : (एकदम भौंचक्का-सा देखता रहता है। फिर एकदम पास आकर) क्यो इस तरह चिल्ला रहे हो ?...यदि कोई इतनी महत्वपूर्ण बात थी तो तुम साथ लेकर आते उनको। वे तो यहाँ आकर ऊल-जलूल बक रहे थे...।

नरोत्तम : (उसी तरह गुस्से में) ये सब तो बहाने हैं—उस खबर को छापने का खतरा मोल ले सकें, इतनी हिम्मत ही कहाँ है आप लोगों मे ? इतने दिनों में यह तो समझ ही लेना चाहिए था मुझे कि आप लोगों के लिए अखबार का मतलब है सिर्फ़ धंधा। कितने बेदम, बेजान और नपुसक हैं हम सब पत्रकार !

दत्ता बाबू : (सख्त आवाज में) नरोत्तम, यह चुनाव का मंच नहीं, 'मशाल' का दफ़्तर है, और 'मशाल' कोई चंडूखाना नहीं जो बे-सिर-पैर की खबरें छापता रहे।

नरोत्तम : बे-सिर-पैर की खबरें ?...'मशाल' की शक्ल सुधारने के लिए रात-दिन एक किया है मैंने...उसे थोड़ा ढंग का...।

दत्ता बाबू : विरोधी पार्टी के लोग बिसू की मौत को हथकंडे की तरह इस्तेमाल कर रहे हैं...और तुम हो कि उनका झंडा उठाये फिर रहे हो। 'मशाल' का इस्तेमाल करना चाहते हो उनकी इन टुच्ची हरकतो के प्रचार के लिए। ये सब यहाँ नहीं हो सकता है, समझे !

नरोत्तम : लानत है मुझ पर जो अब एक दिन के लिए भी इस अखबार के साथ जुड़ा रहूँ...!

भवानी उसे सांत्वना देने के लिए पकड़ना चाहता है, पर वह झटककर निकल जाता है। भवानी हतप्रभ-सा दत्ता बाबू को देखता है। अन्धकार।

दृश्य : सात

पीछे से ग्रामोफ़ोन पर बहुत ही चलती हुई धुन का रिकार्ड बज रहा है। गाँव के पंचायतघर में सजावट हो रही है। चारों ओर चहल-पहल। जोरावर हाथ में एक काग़ज़ लिये भीतरी कक्ष से प्रवेश करता है। सिगरेट का एक गहरा कश खींचकर चारों ओर देखता है। एक लड़की ज़मीन पर गिरे हुए फूल-पत्ते साफ़ कर रही है, दूसरा लड़का माला लटका रहा है। एकाध लड़का या लड़की काम करते हुए दिखाये जा सकते हैं। माला हाथ में लिये एक लड़की 'राम-राम ठाकुर साहेब' कहती है।

जोरावर : 'राम-राम'। जल्दी से दो माला दरवाज़े पर और लटका दे। और देख, दा साहब को पहनाने वाले हार अलग रखना। *(सफ़ाई करने वाली लड़की से)* *ज़रा जल्दी हाथ चला ना।* खड़ी मुंह क्या ताकती है! (एक कार्यकर्ता दौड़ता हुआ आता है)

कार्यकर्ता : जोरावर जी, मंच पर माइक और रोशनी का इन्तज़ाम तो हो गया।

जोरावर : हो गया? मैंने अच्छी तरह देख लिया, ऐन मौके पर ससुरा कहीं किर्र...की-कूँ न करने लगे।

कार्यकर्ता स्वीकृति में सिर हिलाकर लौटता है, गाँव का एक लड़का आता है।

लडका : दद्दा, पानी की दुओ गाडी आय गयी।

जोरावर : तो छिडकवाओ पानी और घड़े भरवाओ। (लड़का लौट जाता है)

: (फिर लठैत से) मंच के पास सब बइठ गये? लठैतन को एक बार फिर बोल देओ, हिलने नहीं देंगे कोऊ ससुरे को वहाँ से। और सुनो, पंचायतघर की तरफ फटके नहीं कोई।

माला लटकाकर लड़की एक बार चारों तरफ़ नजर डालती है।

लड़का : वाह, जँच गया अपना पंचायतघर तो !

जोरावर : जँचेगा नाही ? (लड़की से) नीबू-पानी तैयार है न ? दा साहेब को आते ही नीबू-पानी देना—टिरे मे जमाकर, सउर से।

लड़की : सब तैयार है।

मंच के दूसरी तरफ़ से काशी के साथ चार-पांच लड़के काली झंडी लिये आते दिखायी देते हैं।

जोरावर : (लड़के से) ठीक पांच बजे दा साहब की गाड़ी पहुँच जायेगी। दा साहब समय के ऐसे पाबन्द कि चाहो तो घडी मिला लो। (कागज की ओर देखते हुए) पांच से सवा-पांच तक पंचायत-घर मे स्वागत, सवा-पांच से छह बजे तक मंच पे भासन, छह बजे उद्घाटन—फिर हमारा धन्यवाद का भासन...(एकाएक काशी और उनके लड़कों पर नजर पड़ती है जो पंचायतघर के क़रीब आ गये हैं)

: ऐ कासी दादा, हियाँ नही चलेगा ई सब। जो गडबड़ कुछ की है न तुम्हार इन लौंडे-लपाड़ों ने आज के दिन तो—जोरावर के गाँव में दा साहब के सामने कोई ऐसी-वैसी बात...!

काशी : गड़बड कुछ नही, सिर्फ मौन विरोध प्रकट करेंगे (लड़कों से) दा साहब आयें तो काली झंडियाँ दिखाकर सिर्फ़ नारा देना है—हुड़दंग ज़रा भी नही।

जोरावर : नारा देकर मौन विरोध होगा ?

काशी : (हँसकर) मौन मे नारा तो चलता ही है।

जोरावर : जो भी करवाना है उधर मंच पर करवाओ। यहाँ पंचायत-घर में कोई झमेला—टंटा-बखेड़ा नाही।

काशी : (हलके-से व्यंग्य के साथ) दा साहब जिस योजना का उद्घाटन करने आ रहे है उसमें न तुम, न तुम्हारी पंचायत—फिर काहे इतनी उछल-कूद कर रहे हो ?

जोरावर : योजना ससुरी की ऐसी-की-तैसी—सरोहा में कोई काम बिना जोरावर के हुआ है आज तलक ? समझे ?

'दा साहब आ गये—दा साहब आ गये' का शोर। काशी अपने लड़कों को साथ लेकर उधर ही बढ़ जाता है। जोरावर और उसके साथी भी जल्दी-से माला लेकर उधर बढ़ते हैं। आगे-आगे डी० आई०

जी०, फिर दा साहब, लखन और पांडे का प्रवेश। इनको देखते ही।

काशी के लड़के : न्याय चाहिए, न्याय चाहिए! बिसू की मौत का जवाब चाहिए!

दू० कार्यकर्ता : बिसू की मौत—

सब : जुलुम है।

डी० आई० जी० लड़कों को एक तरफ़ हटाने की कोशिश करते हैं। जोरावर एक हाथ उठाकर जोर से चिल्लाता है।

जोरावर : दा साहब जिन्दाबाद...।

सब : जिन्दाबाद, जिन्दाबाद!

काशी के कार्यकर्ता एक बार फिर नारा लगाते हैं। दा साहब सारे माहौल को सूंघते हैं, चेहरे का भाव बदलता है। जोरावर जल्दी से माला लेकर आगे बढ़ता है। पीछे-पीछे एक-दो लोग भी बढ़ते हैं। दा साहब जोरावर के बढ़े हुए हाथों को एक ओर हटा देते हैं।

दा साहब : (पांडे से) बिसू का घर कहाँ है, पहले वहाँ चलेंगे।

पांडेजी : (भौंचक्के भाव से) जी साहब?...कार्यक्रम में तो पहले पंचायत-घर चलना है, साब!

जोरावर : (लोगों को हटाकर रास्ता बनाते हुए) आप पंचायतघर चलो, दा साहब...बिसू का बाप वहीं आ जायेगा। स्वागत का कार्यक्रम तो आपका पंचायत-घर में है।

दा साहब : मैं स्वागत करवाने नहीं, संवेदना प्रकट करने आया हूँ।

काशी के कार्यकर्ता फिर नारा लगाते हैं। डी० आई० जी० चारों तरफ़ देखकर।

डी०आई०जी० : सर, मेरे खयाल से उधर जाना...सिक्योरिटी अरेंजमेंट्स...!

दा साहब : सिक्योरिटी अरेंजमेंट्स की क्या जरूरत है? अपने ही लोगों के बीच आया हूँ। (क़दम बढ़ा देते हैं। डी० आई० जी० सबसे आगे, लखन साथ चलता है। जोरावर गुस्से से पांडेजी की ओर देखता है)

जोरावर : पांडेजी, ई का पिरोगराम बनाये हो?

पांडेजी : (बेहद परेशान-से) प्रोग्राम तो तुम्हारे कहे मुताबिक ही बनाया था—अब यहाँ आकर दा साहब ने फेर-बदल कर दिया तो...।

जोरावर : क्या फेर-बदल कर दिया, यार...!

पांडेजी जल्दी से दा साहब के पीछे चले जाते हैं। जोरावर भन्नाता हुआ जहां-का-तहां खड़ा रह जाता है। उसके साथ के सब लोग दा साहब के पीछे-पीछे चले जाते हैं। काशी अपने कार्यकर्ताओं को कहता है।

काशी : तुम अब मंच के पास पहुँचो सीधे !

थोड़ी दूर तक दा साहब के पीछे-पीछे जाता है। मंच के जिस ओर से काशी लड़कों को लेकर आया था, उधर से ही गांव के एक-दो आदमी हीरा को लेकर आते हैं। वह कांपता, थरथराता हाथ जोड़कर दा साहब के पास आकर खड़ा हो जाता है।

दा साहब : बिसू का सुना, बहुत अफसोस हुआ। (हीरा सुबकने लगता है, धोती की कोर से आंसू पोंछता है। उसकी पीठ पर हाथ रखकर) धीरज से काम लो हीरा, हौंसला रखो।...सुना, आगजनी में बरबाद हुए परिवारों के लिए बहुत दुखी था बिसू —हम सभी हैं। लेकिन जो हुआ उसे अनहुआ तो नहीं किया जा सकता। अब तो बिसू के अधूरे काम को हमें पूरा करना है। (विराम) आगजनी में जिन लोगों का नुकसान हुआ, उन्हें पांच-पांच हज़ार रुपये की मदद करने का फैसला किया है सरकार ने। यह रुपया तुम अपने हाथों से दोगे, आज ही। इस योजना का उद्घाटन भी तुम्हीं करोगे।...बिसू की आत्मा को शान्ति मिलेगी इससे, चलो...!

भीड़ 'दा साहब जिन्दाबाद' के नारे लगाने लगती है। पांडेजी बेहद परेशान, क्योंकि कार्यक्रम में यह सब था ही नहीं। दा साहब हीरा की पीठ पर हाथ रखे उसे लेकर चल पड़ते हैं। सब लोग पीछे-पीछे चले जाते हैं। प्रकाश धीरे-धीरे काशी पर—चेहरे पर ऐसा भाव, मानो इस सारी स्थिति से दिमाग में कोई नयी बात कौंधी हो। वह पंचायतघर की तरफ़ बढ़ता है। सजे-सजाये पंचायतघर के बाहर जोरावर अकेला बैठा है—दुखी, क्रुद्ध। दा साहब को पहनाने वाली माला उसने गुस्से में फेंक दी है।

काशी : ये क्या, दा साहब तो उधर मंच पर पहुँच गये और दा साहब का खास आदमी यहां बैठा है, अकेला ! (ज़मीन पर पड़ी

माला को उठाता है, पोंछता है, फिर खुद अपने गले में डालते हुए) चलो आज हमहूँ पहन लेत हैं माला, और का !

जोरावर : ठिठोली न करो कासी दादा ई वक्त । भेजा बहुत गरम हुई रहा हमार ।

काशी : (हलके-से हँसकर) साथ रहकर भी तुमने दा साहब को जाना नहीं अभी पूरी तरह । अरे, राजनीति में तो ई सब चलता ही रहता है । (समझाते हुए) तुम्हारे और लोग भी तो गये दा साहब के पीछे-पीछे, तुम भी जाओ । मुख्यमंत्री गाँव में आये और असली सरपंच गायब !

जोरावर : हमसे न जाया जाये भगवान के पीछे भी बेइज्जत होकर । (विराम) जिसे जरूरत होगी, वो खुद हमारे पास आयेगा ।

काशी : सो तो है । जब तुम्हें न देखेंगे वहाँ तो खुद बुला भेजेंगे ।

एक लड़की दौड़ी-दौड़ी आती है ।

लड़की : दद्दा-दद्दा, दा साहब हीरा को आपन पास मा बिठाये हैं । फोटू-पे-फोटू खिचाय रही है, तुमओ चलो, दद्दा !

काशी : दद्दा के नाहीं बुलाय रहे ? ('नाहीं' कहती हुई लड़की उसी जोश में दौड़ जाती है) लो, मंच पर तो तुम्हारी जगह हीरा को बिठा लिये हैं दा साहब ।...माना कि इनको खुस करना जरूरी है, पर ये तो हद्द ही कर दी ।

जोरावर : अरे ना भी बुलायें तो कौन हमारी जात चली जायेगी ! लेकिन मलाल तो ये है कि कल से ये हरिजन ससुरे और भी सीना तान के निकलेंगे हमारे सामने से । (चेहरे पर क्रोध और क्षोभ उभर आता है)

काशी : देखो, अब हरिजनों को तो खुस करके रखना ही पड़ेगा— उसके बिना गुजारा जो नहीं ।...राज नहीं करना है दा साहब को ?

जोरावर : हाँ...आज राजा हो गये...लेकिन पिछले चुनाव में हमारे बिना घर के बाहर कदम नहीं रखते थे...जान मारकर काम किये रहे हम इनके चुनाव में । पैसाओ पानी की तरह बहाया हमने !

काशी : तब कुर्सी के नीचे रहे दा साहब...आज कुर्सी के ऊपर हैं... इत्ता तो सोचो ।

जोरावर : ठीक है...लेकिन ई चुनाव नहीं जीतना है दा साहेब को ? बिना जोरावर के जीत तो लें सरोहा से !

काशी : देखो, दा साहब सोचते है कि जोरावर तो अपना ही आदमी है...थोड़ा-बहुत नाराज भी हो गया तो जायेगा कहाँ ?...पर हरिजन बिगड़ गये तो...सो अभी तो जैसे भी होगा उन्हे बस में करेंगे और इस चक्कर में अब थोड़ी-बहुत बेइज्जती तो बरदास्त करनी ही पड़ेगी तुमको।

जोरावर : जो हमें मान दे, उसके लिए जान हाजिर है। पर कोई बेइज्जती करे तो इत्ता जान ले कि जोरावर की नसों में भी पानी नहीं बहता है।

काशी हँसता है, जोरावर गुस्से से देखता है।

काशी : क्या कर लोगे ? (गरदन जरा-सी आगे करके) सुकुल बाबू को वोट दोगे ?

जोरावर : सुकुल बाबू ! अरे, उस आदमी का नाम न लो तुम हमारे सामने। हम अच्छी तरह जानते है उसे...हम तो ससुरे का गाँव में घुसना बन्द कर दें...देखा नही था उस दिन की मीटिंग में, कैसी सूरत लेकर वापस चला गया था !

काशी : (समझाने के ढंग से) देखो जोरावर, सुकुल बाबू लाख बुरे सही, पर तुम्हारी बेइज्जती तो नही की उन्होंने कभी और न ही तुम्हारा बुरा चाहा।...(क्षणिक विराम के बाद) तुम खुद सोचो, दा साहब को यदि तुम्हारी इज्जत का जरा भी खयाल होता—तुम्हारा हित चाहते तो तुम्हे ही न खड़ा करते सरोहा से ? ऊ दो कौड़ी का लखनवा आज इत्ता सगा हो गया कि चुनाव में खड़ा किया है...सो भी तुम्हारे अपने इलाके से !...अरे तुम्हें खड़ा करते तो किला यूँ ही फतह। सुकुल बाबू की हिम्मतो न पड़ती यहाँ से चुनाव लड़ने की... आखिर तुम सरोहा के बेताज बादसाह ठहरे।

जोरावर : अपनी बादसाहत की फिकर हम खुद कर लेंगे, तुम्हारा कलेजा काहे सूखा जा रहा है ! अरे कामी दादा, तुम्हारी सारी तिकड़मबाजी हम खूब समझते है। ई तो गाँव के नाते का लिहाज है सो...।(हँसता है, फिर पान की गिलोरी काशी को देता है)

वही लड़की फिर दौड़ी-दौड़ी

लड़की : दद्दा, दद्दा ! भासन मा दा साहिब कहित
मामला मा सहर से बड़ा अफसर अइहै,
हुइहै।

जोरावर : (हाथ खींचकर लड़की को वहीं बिठा लेता है) बइठ जा, टाँग तोड़ दूँगा अब जो उधर गयी तो ! (लड़की रुआँसी हो जाती है)

काशी : गुस्सा उस पर काहे निकाल रहे हो ? (लड़की से) जा बिटिया, तू जा। जाय के भौंपू पे भासन सुन। (लड़की सहमी-सी जोरावर को देखती है, फिर भाग जाती है। दोनों कुछ देर तक पीछे से दा साहब की आवाज़ को सुनते हैं) दा साहब के आदेस से जदि बड़े अफसर आ रहे हैं तहकीकात के लिए, तब तो मामला कुछ ज्यादा ही गड़बड़ है। (जोरावर से) कोई झगड़ा किये रहे हो क्या दा साहब से ? (जोरावर चुप, काशी उसके चेहरे पर नज़रें गड़ाकर) एक बार जदि सुरू किया तो हो सकता है हरिजनों को खुस करने के लिए आगजनी वाला मामला भी फिर खुलवायें...वह खुल गया तब तो तुम जरूर ही...।

जोरावर : जो मरजी आये करें...देख लेंगे हम भी।

काशी : क्या देख लोगे ? कौनो तुरप-पत्ता है तुम्हारे हाथ में ?

जोरावर : (थोड़ी देर सोचता है, फिर जैसे एकाएक कोई तरकीब सूझ गयी हो। हँसता है) हमारे लोग वोट ही नहीं देंगे किसी को, (अँगूठा दिखाकर) करवा लो चुनाव !

काशी : (माथा ठोककर) हे भगवान ! तुम्हारी ये मूढ़ बुद्धि ही ले डूबेगी तुम्हें। तुमने हाथ खींच लिया तो सुकुल बाबू की जीत तो पक्की। तुम्ही तो असली ताकत हो दा साहब की। (क्षणिक विराम) फरज करो, न भी जीते तो लखन का रुख तुम देख ही लिये हो...सुकुल बाबू से बहुत बेहतर नहीं है उसका आना तुम्हारे लिए—खास करके दा साहब ने जब आँख फेर ली हो। सुकुल बाबू के आदमी होने के नाते तो हम यही कहेंगे कि तुम हाथ खींच लो।...पर नहीं, गाँव के नाते तुमो हमारे भाई। सलाह खरी देंगे और तुम्हारे हित की देंगे। (जोरावर देखता रहता है, मानो काशी का अभिप्राय समझने की कोशिश कर रहा हो। काशी थोड़ा पास सरककर) सुनो जोरावर, इस चुनाव में पचास-साठ प्रतिसत से ज्यादा वोट तो पड़ने नहीं, लेकिन तुम्हारे पैंतीस प्रतिसत एकदम पक्के... एक नहीं टूटता इनमें से। (फ़ैसला सुनाते हुए) बस तुम खुद खड़े हो जाओ चुनाव में...यही एक रास्ता है बचाव का।

जोरावर : अरे छोड़ो कासी दादा—ई राजनीति-वाजनीति हमारे बस का रोग नहीं...।

काशी : चुनाव जीतकर आ गये न तो ये ही दा साहब अँगूठे के नीचे रहेंगे—पहले की तरह फिर आगे-पीछे घूमेंगे तुम्हारे, मंत्रि-मंडल की भीतरी हालत हमसे पूछो—अब गया ! तब गया ! एक-एक विधायक कीमती हो रहा है इनके लिए। चिरौरी करते फिरते हैं।

जोरावर : पर कासी दादा...!

जोरावर इस तरह देखता है मानो बात समझ में आ रही हो उसके, फिर भी हलकी-सी दुविधा।

काशी : हम तो कहत हैं इस मौके से मत चूको। बादसाहत करनी है अब, तो राजनीति में आकर ही की जा सकती है।

जोरावर : पर कासी दादा, चुनाव ससुरे के सत्तर परपंच...!

काशी : हम पर छोड़ो न...आखिर हम तुम्हारे किस दिन काम आयेंगे भला (*थोड़ा और पास जाकर फुसफुसाते हुए*) और देखो, ये बात अभी हम दोनों के बीच ही रहे। जो दा साहब जान गये तो तुम्हारी खैर नहीं और जदि सुकुल बाबू जान गये तो हम मारे जायेंगे...जाओ, अब मीटिंग में बैठो जाकर...!

दूर से नारों की आवाज आती है—'दा साहब जिन्दाबाद.. बिसू जिन्दाबाद !'

: लो, दा साहब की मीटिंग तो खतम हो गयी लगती है। अब तुम तुरन्त दा साहब के पास जाओ और ऊपर से दिखाओ जैसे तुम उनके ही आदमी हो—परम सेवक ! पर भीतर-ही-भीतर जड़ काट दो बुढ़ऊ की।

जोरावर : (प्रसन्न होकर) अरे कासी दादा, तुम तो बिलकुल...।

काशी : जोरावर के ही आदमी निकले ! (*दोनों ठहाका लगाते हैं*)

तभी पीछे से भीड़ से घिरे हुए दा साहब आते हैं। पत्रकार नरोत्तम और महेश भी कुछ बातें करते हुए साथ-साथ आ रहे हैं। काशी चुपचाप एक ओर सरक जाता है और जोरावर बड़ी तत्परता से आगे बढ़कर हाथ जोड़कर दा साहब के सामने खड़ा हो जाता है। दा साहब भी हाथ जोड़ देते हैं। भाषण समाप्त हो जाने पर पीछे मंच पर देशभक्ति का एक रिकॉर्ड चढ़ा दिया जाता है...

उसी की आवाज आ रही है। सभी पात्र स्थिर हो जाते हैं...सिर्फ़ गाने की आवाज गूंजती रहती है। कुछ क्षणों के बाद महेश सूत्रधार के रूप में आगे आता है। गाने की आवाज एकदम हलकी हो जाती है।

सूत्रधार : तालियाँ बजी, हर्षध्वनि हुई और 'दा साहब जिन्दाबाद' के नारों से सारा माहौल गूंज उठा। बिसू की मौत के जिस प्रसंग को सुकुल बाबू गाँव के घर-घर में फैला गये थे, वह फिर दो-चार घरों में सिमट गया और बाकी घरों में घरेलू योजना के तहत मिलने वाले रुपयों का हिसाब-किताब होने लगा।... तीसरे ही दिन 'मशाल' का नया अंक निकला। प्रथम पृष्ठ पर ही अधिकारी को चैक देते हुए हीरा की बड़ी-सी तसवीर छपी थी, साथ में दा साहब खड़े थे। बड़े-बड़े अक्षरों में शीर्ष-पंक्ति थी—खेत-मजदूरों और हरिजनों की आर्थिक स्थिति सुधारने की दिशा में दा साहब का ठोस और क्रान्तिकारी कदम... यानी कि बिसू की मौत ने 'मशाल' को प्रजातंत्र की जिम्मेदारियों से लैस करके एकाएक महत्वपूर्ण अखबार बना दिया और दत्ता बाबू को एक जिम्मेदार सम्पादक।...पाडेजी ने गाँव के घर-घर में इस अंक की प्रतियाँ बँटवा दी—मुफ़्त !

अन्धकार।

दृश्य : आठ

गांव का थाना। मेज-कुर्सी की झाड़-पोंछ हो रही है। थानेदार चौकीदार को आदेश देता जा रहा है। थाने के बाहर मैदान में काफ़ी लोग जमा हैं। एक ओर महेश अकेला बैठा है। थोड़ी दूर पर कुछ गुंडा क़िस्म के लड़कों का एक दल बैठा है। दूसरी ओर हीरा को घेरकर कुछ लोग बैठे हैं।

आदमी 1 : अरे, अखबार मा तो हीरा काका का फोटू निकली है।

आदमी 2 : हमहू तो तनी देखी। (लोग अख़बार पर टूट पड़ते हैं) अरे, हमहू...!

आदमी 1 : वाह ! पगड़ी कैसी झुग्गादार, तनी डंडा तो देखो...!

आदमी 3 : दा साहब पीठ पर हाथ धरि है...हीरा बड़ा भागवान।

थानेदार आकर सबको घूरता है, फिर कड़ककर।

थानेदार : काहे आये हो इत्ते लोग ? हियां कोई नौटकी का तमासा होये वाला है का ?

सब सहम जाते हैं।

गांववाले : हियां दूर बइठे रहेंगे, सरकार...बैठन दो।

थानेदार : सुन लो। जइसे ही एस० पी० साहब की जीप अहाते मा घुसे बतकही एकदम बन्द। जिहि का बयान होवे को है, वही भीतर आये, एकदम इकल्ला—समझे ? जो गड़बड़ की-है न, खाल खींचकर भुस भरवा दूंगा सब ससुरन के।

जोर से डंडा हवा में मारता है। जोगेसर थर-थर कांप रहा है...कुछ कहने की कोशिश करता है, पर केवल हकलाकर रह जाता है। थानेदार वहां से डंडा घुमाता हुआ वापस कमरे की ओर जाता है, बीच में लठैत से।

थानेदार : तुम बाहिर का सम्भारि के रखो...भीतर का हम देखि लेईहैं।

लठैत : फिकिर न करो।

थानेदार : जरूरत हुई तो...(हाथ से कुछ इशारा करता है—दोनों मुसकराते हैं)

एकाएक जीप की आवाज आती है। जल्दी से आगे बढ़कर थानेदार अटेंशन की मुद्रा में खड़ा हो जाता है। सक्सेना एक कांस्टेबल के साथ भीतर आता है। थानेदार सेल्यूट मारता है। सक्सेना चारों ओर नजर घुमाता है, वातावरण को सूंघता है, दूर बैठे लोगों की ओर देखकर।

सक्सेना : क्या इतने लोगों के बयान होने हैं ?

थानेदार : नहीं सर, बयान तो केवल चार के ही होने हैं। गाँव के लोग हैं न, सर...सख्ती करने की मनाही थी वरना तो ..!

सक्सेना : ठीक है।

भीतर जाता है, कुर्सी पर बैठकर फ़ाइल खोलता है...पढ़ता है। थानेदार अटेंशन की मुद्रा में खड़ा रहता है। चौकीदार दरवाजे के बाहर खड़ा हो जाता है।

थानेदार : (झुककर अदब के साथ) पहले थोड़ी चाय-वाय हो जाये, सर !

सक्सेना : इस समय ? यह तो काम का समय है। (रुककर) जिन लोगों के बयान होने हैं, वे आ गये ?

थानेदार : और तो सब आ गये सर, पर वो बिन्दा है न...दो बार आदमी भेजा लेकिन...।

सक्सेना : बिन्दा ?

थानेदार : गाँव का बिलकुल छँटा हुआ, सर...(जरा रहस्यात्मक ढंग से) बहुत खतरनाक। वैसे मेरे रहते आपको डरने की जरूरत नहीं, सर !

सक्सेना चुप, जैसे कुछ सोच रहे हों।

: आप कहें तो मुश्कें बँधवाकर...?

सक्सेना : नहीं। (थानेदार कट जाता है, सक्सेना अपने साथ आये कांस्टेबल से) मोहनसिंह, तुम जाओ। कहना कि मैंने बुलाया है...और देखो, बहुत अदब से कहना। (थानेदार से) इसके साथ किसी आदमी को भेज दो।

थानेदार बाहर जाकर एक आदमी को साथ कर देता है...जब वे चले जाते हैं तो लौटकर दरवाजे पर बैठे चौकीदार से।

थानेदार : चुग़द...स्साला ! गवाह को अदब से बुलवा रहा है.. पालकी भेज दे ! (भीतर आता है)

सक्सेना : जोगेसर साहू को बुलवाओ।

थानेदार चौकीदार से कहता है, चौकीदार आवाज लगाता हुआ दौड़ता है।

चौकीदार : जोगेसर साहू हाजिर है...!

जोगेसर थरथराता हुआ भीतर आता है। काँपते हुए हाथों से नमस्कार करता है। सक्सेना ऊपर से नीचे तक उसका मुआयना करता है।

सक्सेना : (फ़ाइल में से पढ़ते हुए) नाम जोगेसर साहू, पिता का नाम भोलेसर साहू...पेशा किराने की दुकान। हूंऽऽ। (नजर जोगेसर के चेहरे पर गड़ाकर) बिसेसर की लाश आपने किस समय देखी ?

जोगेसर : जी, यही कोई भोर साढ़े चार-पाँच का समय रहा होई, सरकार !

सक्सेना : उस समय आप क्या करने गये थे उधर ?

जोगेसर : जी, ऊ तनिक सुनसान रस्ता है सो दिसा-फरागत के लिए उधर ही जाइत हैं, सरकार !

सक्सेना : आपको दूर से कैसे पता लग गया कि पुलिया पर लेटा आदमी मरा हुआ है ?

जोगेसर : नाही, बिलकुल पता नाही लगा, साहब ! हम तो सोचा, जो ई आदमी ने करवट ली तो गिरि पड़िहै नीचे नाला मा। जाकर चैताय दें। जगावे के लिए छुआ तो अरे...ई तो बिसू...मरा हुआ !

सक्सेना : हूंऽऽ...! (क़लम चल रही है) लाश को देखने के बाद आपने क्या किया ?

जोगेसर : हम तो एकदम डराय गये, सरकार ! उलटे पैर लौट के ऊके बाप को खबर दीन। बेकार मा अपने को फँगावा। चुप्पई आगे चले जाइत। मुला डर के मारे समुरी हाजतो खतम...।

(वाक्य अधूरा छोड़ देता है)

सक्सेना : बिसू किस तरह का लड़का था ?

जोगेसर : अरे एकदम सिरफिरा, साहेब ! सारे गाँव के लिए बलाय था समुरा...!

सक्सेना को डी० आई० जी० के शब्द याद आते

हैं—दोहराते हैं।

सक्सेना : ...बलाय...हूं।...सिरफिरे से मतलब ? पागल था ? (नजरें जोगेसर के चेहरे पर गड़ा देता है)

जोगेसर : (हकबकाकर) जी पागल तो...।(एकाएक थानेदार से नजरें मिलती हैं तो चुप)

सक्सेना : बोलो-बोलो, पागल था ?

थानेदार नजरों से ही बढ़ावा देता है।

जोगेसर : (एकदम लहजा बदलकर) अउर का, पागले तो रहा, सरकार ! आपै सोचो, जेहिका दिमाग ठीक होएगा, ऊ कुछ धन्धा-रोजगार नाही करेगा !

सक्सेना : (जैसे कुछ सोच में पड़ गये हों...नजर चेहरे पर टिकी हुई है) अच्छा, यह बताओ, गांव में किसी से दुश्मनी थी उसकी ?

जोगेसर : आधा गांव ही तो दुसमन बना रखा था ससुरे ने। (एकाएक थानेदार पर नजर पड़ती है। तुरन्त लहजा बदलकर) नाही साहब, दुसमनी नाही थी किसी से।

सक्सेना : (डपटकर) नहीं थी दुश्मनी ?

जोगेसर : (एकदम सिटपिटा जाता है) अब का बतायें, सरकार...(फिर नजर थानेदार की तरफ उठती है। वह आंखों से ही घुड़कता है। सक्सेना भी देख रहा है) हम कहा न साहब, ऊ के बारे मा कछु नाही मालूम।

थानेदार : हाँ साब, उस पागल से सब दूर रहते थे...।

सक्सेना : (घूरकर देखता है। थानेदार सिटपिटाकर चुप हो जाता है) तो आपकी जानकारी में उसकी किसी से दुश्मनी नहीं थी ?

जोगेसर : हाँ साहेब, हम तो दूसरन के मामला मा पड़बे नाही करें। हम तो कहत हैं साहेब, सब अपने-अपने धन्धन मा लगे रहो... अपनी-अपनी सुलटो। का पागल कुत्ते ने काटा है जो दूसरे की बात मा टांग...!

सक्सेना डंडे के इशारे से चुप कराता है। एक बार ऊपर से नीचे तक देखता है।

सक्सेना : अच्छा, अब आप जा सकते हैं।

जोगेसर : हम आपसे फिर कहत हैं, सरकार, ई मामले मा हमार कउनो लेन-देन नाही। आप तो माई-बाप हैं हमरे, आपसे झूठ न बोलेंगे। हम एकदम बेकसूर...।

सक्सेना का इशारा पाकर थानेदार जोगेसर को

बाँह पकड़कर बाहर करता है। वह थरथराता हुआ बाहर जाता है। सक्सेना कुछ लिखने लगता है।

थानेदार दरवाज़े पर बैठे चौकीदार से।

थानेदार : सउरा, बोलन नाही देत हमको...अरे हमी थानेदार हैं।

जोगेसर के निकलते ही बाहर की भीड़ उसे घेर लेती है।

आदमी 1 : अरे साहू, का पूछिस रही ?

आदमी 2 : हड़काइस तो नाही ?

जोगेसर : (अभी भी थरथरा रहा है) नाही। अब जब ई मामिले से हमार कउनो मतलबै नाही, तो फिर हमसे जादा का पूछिहैं !

सक्सेना : (थानेदार के लौट आने पर) महेश शर्मा को बुलाओ। (थानेदार चौकीदार को हुक्म दे देता है) सुनो, कैसा आदमी है ये ? बात का भरोसा कर सकते है।

थानेदार : एकदम गउ, सर ! बड़ा भला और जिम्मेदार। आप इसकी

सक्सेना : हूंऽऽ...!

महेश शर्मा आता है। ऊपर से नीचे तक मुआयना करता है।

सक्सेना : आप यहाँ के तो नहीं मालूम पड़ते, मिस्टर शर्मा ?

महेश : जी नहीं, मैं दिल्ली से आया हूँ अपने रिसर्च प्रोजेक्ट के सिलसिले मे—गाँव मे क्लास-स्ट्रगल और कास्ट-स्ट्रगल...।

सक्सेना : वैरी इन्टरेस्टिंग सब्जेक्ट। कब से हैं आप यहाँ ? बैठिये !

महेश : कोई डेढ़ महीना हुआ।

सक्सेना : हूंऽऽ ! सुनते हैं, बिसू आपके पास रोज आया करता था ?

महेश : रोज तो नहीं, पर अकसर आया करता था।

सक्सेना : किस तरह की बातें किया करता था वह आपसे ?

महेश : बातें ?

महेश थोड़ा असमंजस में पड़ जाता है, जैसे समझ ही नहीं आ रहा हो कि क्या कहे।

सक्सेना : हाँ-हाँ, बोलिये।

महेश : वह बहुत सेन्सेटिव था सर, एक्स्ट्रा सेंसेटिव, बहुत परेशान रहता था वह।

सक्सेना : क्या थी उसकी परशानी ?...समथिंग पर्सनल ?

महेश : पर्सनल ? (इस भाव से मानो इस शब्द का अर्थ ही न समझता हो)

सक्सेना : हाँ-हाँ...वह एक्स्ट्रा सेन्सेटिव था, बेकार था, जवान था...हो सकता है, कभी किसी लड़की...?

महेश : (बात काटकर) अरे नहीं...नहीं सर, एकदम नहीं। (दृढ़ता के साथ) इस तरह का लड़का वह था ही नहीं।

सक्सेना : (मुसकराकर) क्यों, लड़कियों से प्रेम करने वाले लड़के किसी खास तरह के होते हैं? (थानेदार भी हें-हें करके हँसता है)

महेश : (एकदम तैश में) कैसी बात करते हैं आप...!

सक्सेना : तब फिर क्या थी उसकी परेशानी?

महेश : (कुछ देर सोचने के बाद) वैसे तो वह इस पूरे सेट-अप को लेकर ही परेशान रहता था। लेकिन पिछले महीने आगजनी की जो घटना घटी उसको लेकर कहता था कि पूरा-का-पूरा मामला जान-बूझकर दबा दिया गया है। झूठी तसल्ली देने के लिए बेचारे कांस्टेबल को सस्पेंड कर दिया, पर असली मुजरिम के खिलाफ कुछ नहीं हुआ। इस बात ने तो उसे बिलकुल बौखला दिया था। ही वाज़ नॉट इन हिज़ प्रॉपर सेन्सेज़।

सक्सेना : ओह, आइ सी! (इस वाक्य को जैसे दिमाग में बिठा लिया हो)

महेश : बड़े आवेश में आकर वह मुझसे कहता था—यह थोड़े-से आदमियों के मारने-भर की ही बात नहीं है, महेश बाबू। समझ लीजिये कि पूरी-की-पूरी बस्ती का हौसला ही मर गया। आठ महीनों तक रात-दिन समझा-समझाकर इन हरिजनों को इस लायक बनाया था मैंने कि छाती ठोककर अपना हक़ माँग सकें...अब बहुत दिनों तक...।

सक्सेना : (बात बीच में काटकर) लड़का नक्सली था?

महेश : नहीं। नक्सलियों को तो क्रिटिसाइज़ करता था।

सक्सेना : क्यों मजदूरों को भड़काना-लड़ाना, नक्सली भी तो यही सब करते हैं!

महेश : (हल्के-से तैश के साथ) भड़काता नहीं था सर, उन्हें केवल अवेयर करता था अपने अधिकारों के लिए।...इसी बात को लेकर।

सक्सेना : लेकिन आपने कभी समझाया नहीं कि यह कोई एक-दो लोगों के करने का काम नहीं?

महेश : नहीं, सर!

सक्सेना : क्यों? आपका तो विषय है क्लास-स्ट्रगल।

महेश : (व्यंग्य से) बिलकुल। लेकिन हमें परमिशन नही है सर, कि हम गाँव की समस्याओं और लोगो के साथ इनवॉल्व हों। फ़ैलोशिप की पहली शर्त होती है यह। (गुस्से से) यह सारी-की-सारी एजुकेशन अज्ञान में रखना चाहती है हमको...नही चाहती कि हम अपने आसपास की असलियत को जानें, उससे जुड़ें। फ़ॉर्म मे भरकर देना होता है हमको कि हम सिर्फ़ देखेंगे ...तटस्थ होकर। जो कुछ ग़लत है, उस पर रिएक्ट नही करेंगे ...खून नही खौलने देंगे अपना।...आप ही बताइये, क्या मतलब है ऐसी एजुकेशन का ?

सक्सेना : (हाथ से रोकते हुए) देखिये मिस्टर शर्मा, मैं यहाँ भाषण सुनना नही चाहता। मेरी बातों का सीधा जवाब दीजिये।

थानेदार : अदब से बात करो बड़े साहब से...चार किताबें क्या पढ़ ली...?

महेश : (उसी आवेश में) आप नही चाहते...कोई नही चाहता कि असली मुद्दो पर बात की जाये, लगता है जैसे एक बहुत बड़ा षड्यन्त्र है। (आवेश में आकर) सब कतराते हैं। मैं पूछता हूँ क्यों...?

सक्सेना : (सख्ती के साथ) बिल यू प्लीज स्टॉप दिस नॉनसेंस ?

महेश : (कुछ देर सक्सेना को घूरता रहता है, फिर अपने को संयत करके ठंडी आवाज में) पूछिये, क्या पूछना है आपको ?

सक्सेना : क्या आपकी राय में बिसू बहुत नर्वस, टेम्परामेंटल या इरेटिक किस्म का लड़का था ? (महेश चुप) मिस्टर शर्मा, बताइये किस तरह का लड़का था बिसू ?

महेश : बहुत मुश्किल है, सर...नही बता पाऊँगा।

सक्सेना : (गुस्से से) ब्लाट ? आप थीसिस लिखकर देंगे और साथ उठने-बैठने वाले लड़के के बारे में दो लाइन नही कह सकते ? (नजरें महेश के चेहरे पर गड़ाकर) आपके इस रवैये का कोई खास अर्थ लगाया जाये तो ? यू नो, ब्लाट आई मीन ?

महेश : (आवेश के साथ) दो लाइन मे ? एक लड़के की पूरी जिन्दगी को...उसके सारे सघर्ष को, उसकी हत्या को आप कुल दो लाइन मे समझना चाहते है ? और कोई बता भी दे तो समझ सकेंगे...कर सकेंगे महसूस कि क्या थी उसकी परेशानी... उसकी तकलीफ़ ?

सक्सेना : मिस्टर महेश...बन्द कीजिये यह बकवास ! मुझे अपनी बातों का सीधा जवाब चाहिए।

महेश : (उसी रौ में) इतने सीधे और बने-बनाये जवाब तो आपको सिर्फ किताबो मे मिल सकते हैं और कितनी झूठी होती है किताबों की दुनिया...फ़ार्स ! हमे गाँव की ज़िन्दगी के बारे में कुछ बने-बनाये नतीजे निकालकर थमा दिये...हम उन्ही से सिर फोड़ते रहे है...समझते रहे कि हम गाँव जान रहे हैं, हमने गाँव जान लिया ! लेकिन गाँव की असलियत...बिना पूरी तरह जुड़े कोई जान सकता है गाँव की असलियत ?

सक्सेना : (गुस्से से चिल्लाकर) आइ से, स्टॉप दिस !

महेश : (बिना कुछ सुने अपनी ही रौ में) मान लीजिये आपको नतीजा पहले ही थमा दिया जाये और आप उसी को ध्यान मे रखकर गवाहियाँ जुटायें...बयान-पर-बयान लिये जायें, किसी को सज़ा भी दे दें और एक दिन अचानक पायें कि असलियत तो कुछ और ही है...बिलकुल दूसरी ! कैसा लगेगा आपको ? हिल नही जायेंगे भीतर तक ?

सक्सेना : (सख्ती के साथ) मिस्टर महेश, मैंने आपको अपने सवालो के जवाब देने के लिए बुलाया है, आपके बेसिर-पैर के सवाल सुनने के लिए नही ! (गुस्से से चेहरा तमतमा जाता है)

महेश : लेकिन इस तरह के हादसे इन्ही सवालो से जुड़े हुए हैं और इन सवालो को सुलझाये बिना आप किसी सही नतीजे पर पहुँच ही नही सकते।

सक्सेना : बिल यू प्लीज़ गेट आउट !

थानेदार : (हाथ पकड़कर धकियाते हुए) चलो, निकलो यहाँ से !

महेश : (जाते-जाते) लेकिन सर, मुझे बहुत-कुछ बताना है, इस केस के सिलसिले में ही बताना है...आपको सुनना होगा...।

थानेदार धकेलता हुआ बाहर ले जाता है...महेश के जाने के बाद चौकीदार से।

थानेदार : कड़क है...कड़क है। साले उस सहरिये की तो छुट्टी कर दी। भेजा गरम हुई गवा सरउ का...कही इधर न फैर करने लगे।

भीतर जाता है।

: सर, अब थोड़ा रेस्ट हो जाये, एक राउड ठंडे का या चाय का ?

सक्सेना : ठीक है, ले आओ।

थानेदार : यस सर ! (बाहर जाकर, चौकीदार से) चाय ला फटाफट !

चौकीदार लपककर चाय को ट्रे जमाता है महेश के निकलने पर गांव वाले उसे घेरते हैं, पर वह दनदनाता हुआ निकल जाता है।

आदमी 1 : का हुई गवा ? ई तो पढा-लिखा रहा तबै...।

आदमी 2 : का जानी ! कछु बोलिबे नाही रहे।

थानेदार चाय और खाने का सामान लेकर भीतर आता है। बड़े अदब से पेश करता है। सक्सेना गहरे सोच में डूबे हुए हैं, मानो महेश की बातों ने उन्हें कहीं परेशान कर दिया हो। सक्सेना सिगरेट-केस निकालते हैं, फिर थानेदार की ओर बढ़ाते हैं। थानेदार बड़ी ललचायी नजरों से देखता रहता है। फिर अपने पर क़ाबू पाकर।

थानेदार : नही सर, बस आप ही पीजिये।

सक्सेना : क्या बात है, सिगरेट नही पीते ? (खट से सिगरेट-केस बन्द करके जेब में) अच्छा, चाय तो लो अपनी।

थानेदार : जी सर, (सकुचाते हुए चाय लेता है। फिर हिम्मत करके) देखिये सर, पिछली बार के सारे बयान मैंने ही लिये थे... बहुत साफ़ है सारा केस, आपको इतना परेशान...।

सक्सेना : (बात अनसुनी करके) गरम कुछ ज्यादा ही है यह जगह।

थानेदार : (कट जाता है। उखड़े स्वर में) जी सर, पेड़-पौधे तो हैं नही आस-पास, बस लू के सपाटे चलते रहते हैं। (सक्सेना चुप। थोड़ी देर बाद थानेदार हिम्मत करके) यह बिसू बिलकुल बेकार लड़का था, सर...।

सक्सेना : (घड़ी देखकर) काम शुरू किया जाये !

थानेदार : यह क्या सर, आपने तो कुछ खाया ही नही ? सरपंच साहब ने...।

सक्सेना : (फ़ाइल में देखते हुए) हीरा को बुलाओ।

थानेदार ट्रे उठाकर बाहर जाता है। चौकीदार से।

थानेदार : ई ससुरा तो पुट्ठन पै हाथ ही न धरन देत। सारे गांव मे बेइज्जती करा रहा है मेरी...ये तो दो दिन मे चलता बनेगा, थानेदारी तो मुझै करनी पड़ेगी इनके सिर पे। हीरा को बुला।

चौकीदार : हीरा हाजिर है...!

हीरा उठता है, सब उसे घेर लेते हैं।

आदमी 1 : हीरा दादा, डेरायो ना...जौन पूछें सब बताय दिहयो।

आदमी 2 : हम सब तुम्हार साथ हैं, और फिर साँच के आँच का!

आदमी 3 : हाँ भइया, बिसू तो ना मिली, मुला निपाव तो मिलवे का चाही। दा साहब तो कहित है कि तुम्हार सब तरह से मदत करि हैं, फिर काहे का डर?

आदमी 2 : कहो तो हमहूँ साथ चली?

तीन-चार लोग थोड़ी दूर तक हीरा के साथ-साथ चलते हैं। बीच में सठैत उन्हें फटकार देता है। हीरा अकेला लाठी टेकता हुआ अन्दर आता है।

थानेदार : हीरा...सर!

सक्सेना : (कुछ देर तक हीरा का चेहरा देखने के बाद बहुत कोमल स्वर में) *बैठ जाओ बाबा, आप बैठकर ही बयान दो।* (थानेदार से) स्टूल लाओ।

थानेदार स्टूल लाता है, हीरा उस पर बैठ जाता है।

सक्सेना : देखो बाबा, जो कुछ पूछा जाये सच-सच कहना। डरने की कोई बात नहीं।

हीरा : अब झूठ बोलिके का हुई, सरकार? हमार बिसुआ तो चला गवा...(गला भर्रा जाता है)

सक्सेना : बिसेसर की उम्र क्या थी?

हीरा : एक बीसी और आठ बरस। भादों का ही तो जनम रहा, सरकार!

सक्सेना : कुछ पढ़ा हुआ था?

हीरा : बहुतै पढ़े रहा, सरकार! चौदह किलास पास। सहर भेजिके पढ़ावा रहा। (एक क्षण रुककर) बिसू के बारे मा जाने कउन-कउन सपनाओ देखे रहा...बड़ा आदमी बनि है...कुर्सी पर बइठ के काम करिहै...पर...(गला रुँध जाता है)

सक्सेना : काम क्या करता था?

थानेदार : (ज़रा-सा झुककर सक्सेना से) नक्सली था सर...गुंडागर्दी करने वाला...।

हीरा : नाहीं साहब, पहिले तो हियाँ हरिजन टोला मा अपना इसकूल खोले रहा। लरकन, बड़न सबका पढावा रहा...बहुतै सोक रहा पढ़ावे का...पर बाद मा तो सब छुटिगा।

सक्सेना : क्यों?

हीरा : जेहल चला गवा रहे ना...चार साल मा सब मटियामेट। लौटे के बाद फिर पहिले जस इसकूल जमबे नही भा।

सक्सेना : लेकिन जेल क्यों गया ?

हीरा : सो तो आपौ जानो, सरकार ! आपौ लोग ही तो पकरिके ले गये रहे।

सक्सेना : अरे भई, कुछ तो किया होगा। तभी तो उसे सज़ा हुई।

हीरा : नाही, सजा तो कउनो भई नही, सरकार ! कउनो मुकदमाओ नाही चला। बस एक दिन भिनसारे आये अउर बाँधिके ले गये। दुइ महीना तक तो सरकार, हमका पतो ही नाही लगा कि कहाँ है हमार बिसुआ। बहुत छटपटायेन हम...पर कउन पूछत है हम गरीबन का दुख-दरद...कीडा-मकोड़न जस हमारी जिनगानी। (गला भर्रा जाता है। धोती की कोर से आँसू पोंछता है) सब कोई हमका धकियाय देत रहा...।

थानेदार : जित्ती बात पूछी जाये उत्ती ही बोलो ! जियादह बकवास...।

थानेदार को सक्सेना डंडे के इशारे से चुप करता हैं। थानेदार फटकर रह जाता है।

सक्सेना : जेल से छूटने के बाद क्या करता था बिसू ?

हीरा : का करता, सरकार ? बस बहुत बेचैन रहत रहा...जाने कउन दुख लागि गवा रहे। हमको तो लगते नाही रहा कि ई हमार वही बिसुआ है...बडी चुस्ती-फुरती रही वाहिका सरीर मा...मुला सब निचुडि गयी।

सक्सेना : (लिखते हुए)...इसका मतलब, कुछ कमाता-धमाता नही था ?

थानेदार : सिर्फ अवारागर्दी करता था, सर !

सक्सेना : (थानेदार से) आप ज़रा चुप रहेंगे ? इन्हे ही बात करने दीजिये। (थानेदार भन्ना जाता है, पर ऊपर से—"यस-सर" कहता है)

: (हीरा से) आप लोग कुछ कहते नही थे ?

हीरा : का कहत, सरकार ? हाँ, महतारी जरूरै लड़ते रही।

थानेदार जल्दी से बाहर जाता है और चौकीदार से—

थानेदार : ससुरा बयान लेने आया है कि आरती उतारने आया है इनकी ! बडा परेम फूट रहा है गाँव वालों के लिए मारदचोद के। जब से लगा रखी है—इन्हे घुड़को मत, रोको मत। मैं जरा-सा

भी बोलूं तो सउरा डंडा से अइसा दाग देत है कि जीभ तालू मे चिपक के रहि जात। (ज़रा धीरे से) लौंडों से नारे लगवाओ।...जोर-जोर से।

वापस आकर अटेंशन की मुद्रा में खड़ा हो जाता है। चौकीदार गुंडा क़िस्म के लड़कों को इशारे से बुलाता है। इशारा करता है। लड़के थाने के दरवाज़े पर आकर ज़ोर-ज़ोर से नारे लगाने लगते हैं।

लड़के : यह नाटकबाजी—नही चलेगी...नहीं चलेगी ! एस० पी० साहब—वापस जाओ...वापस जाओ !

सक्सेना : (शोर सुनकर भृकुटि चढ़ जाती है) कैसा है यह शोर ?

थानेदार : वो सर चुनाव का मौक़ा है न...विरोधी पार्टी के लोग...। जलूस पर पाबन्दी लगाना मना है न सर, वरना तो मैं...।

सक्सेना : बन्द करवाओ !

थानेदार : (बड़ी तत्परता से) आपका हुकुम है तो अभी करवाता हूँ, सर ! (तेज़ी से बाहर आता है और दरवाज़े पर से ही डपटकर बोलता है) भागो यहाँ से...भैरोसिंह के थाने पर नारे लगाने की हिम्मत कैसे हुई तुम्हारी ! मालूम नहीं, खास कचहरी लगी है आज। हरामियो, एक-एक की खाल खींचकर भुस भर दूंगा ! (उन लोगों को इशारा करके धीरे से कहता है) थोड़ी देर बाद फिर चालू हो जाना ! (नारों की आवाज़ बन्द। विजेता की मुद्रा से अन्दर आता है) हटा दिया, सर... ऊपर का हुकुम न हो तो पत्ते की तरह काँपते हैं सर, मुझसे।

सक्सेना : हूंऽऽ! (जैसे स्थिति को भाँप रहे हों) अच्छा बाबा, गाँव में उसका दोस्त कौन था ?

हीरा : खास दोस्त तो बिन्दे रहा। भइयन मा भी अइसा पिरेम न मिलीहै आपका।

सक्सेना : और यह रुक्मा कौन है ?

हीरा : अरे वाहि केर घरवाली, सरकार ! एहि गाँव केर लड़की... बिटिया जस। बिमू का इसकूल मा पढ़त रही...बहुत मानत रहा बिसवा...बहुत नेह रहा वाहि पर।

सक्सेना : हूंऽऽ! (जैसे इसके भीतर की असलियत जानने की कोशिश कर रहे हों) शादी कब हुई रुक्मा की ?

हीरा : याही कउनो तीन बरस।

सक्सेना : हूं ! तो इसका मतलब, बहुत पुरानी दोस्ती नहीं थी बिन्दा

और बिसू की...जैसे बचपन की दोस्ती।

हीरा : नाही, ऊ तो रुक्मा से रही। बिन्दा तो सहर का रहे वाला। जब रुक्मा का बाप मरिगा तब गाँव आये रहे खेती सम्हारे खातिर...बाप की एकल लड़की तो...।

सक्सेना : हूंऽऽ! अच्छा, बिसू और बिन्दा लड़ते भी थे आपस में ?

हीरा : अरे खूब लड़त रहे, सरकार...मार जोर-जोर से लड़त रहे।

सक्सेना : (चौकन्ना होकर) किस बात पर ?

हीरा : अब हम खुरपा-फरुहा वाले मजूर ठहरे, चौदह किलास पास लोगन की बात समझि सके, सरकार !

सक्सेना : (चुभती नजर से देखते हुए) रुक्मा को लेकर तो कभी झगड़ा नहीं हुआ दोनों में ?

हीरा : रुक्मा का लेकर ? (जैसे बात समझा न हो, फिर एकाएक) अरे हाँ, सो ओ होत रहा। बिन्दा कहत रहा कि रुक्मा का बहुत कानून सिखाई दिहिस है बिसुआ...बड़ी बहस करत है...कउनो बात ही नाही सुनत। (चेहरे पर वात्सल्य उभर आता है)

सक्सेना : (कुछ नोट करने के बाद) बाबा, डाक्टरी जाँच के मुताबिक बिसू के शरीर पर कई जख्मों के निशान थे। कभी मार-पीट हुई उसकी किसी से ?

हीरा : नाही साब, नाही। ऊ निसान तो सरकार, जेहल से जब छूटिके आवा रहा तबै के हैं। जब आवा रहे न साब, तब कलाइ और टखनन पर तो घावँ रहे...उनते खून और मवाद आवत रहा। घी अउर हल्दी का फाहा रखि-राखिके बड़ी मुसकिल से घावँ ठीक किहिस वाकी महतारी। चार साल तक जेहल मा हथकड़ी-बेडी नाही खोली गयी हमार बिसू के हाथ-पाँव से... सरीर पर बहुते मार लगायी रहि। सारे सरीर पर जखमे-जखम रहे (गला भर्रा जाता है) बहुतै मुलायम रही खाल हमार बिसू की साहेब...बहुते मुलायम। (घुटनों में सिर देकर फूट-फूटकर रोने लगता है)

सक्सेना भीतर से हिल जाता है। उठकर हीरा के पास आकर उसकी पीठ थपथपाकर सान्त्वना देता है।

सक्सेना : धीरज धरो, बाबा ! (थानेदार से) पानी लाओ ! (थानेदार पानी पिलाता है) अच्छा, अब यह बताओ, गाँव में दुश्मनी

थी उसकी किसी से ? (हीरा चुप) डरो नहीं...बोलो... (प्रश्न के साथ ही थानेदार का सिर थोड़ा आगे को निकल आता है) देखो बाबा, यह जानना बहुत जरूरी है कि गाँव में उसकी दुश्मनी थी या नहीं ? (हीरा चुप। सक्सेना सख्ती के साथ) गाँव में उसकी दुश्मनी थी ? बताओ !

हीरा : का बतायी, सरकार...दुसमनी तो नाही, मुदा (फिर हिचकिचाने लगता है, सक्सेना बढ़ावा देता है) जोरावर सिंह और मालिक लोग वाहि से बहुत नाराज रहत रहे।

सक्सेना : क्यों ?

हीरा : अब का बतायी, सरकार...बस बचपना रहा हमार बिसुआ का। ऊ सरकार, खेत पै काम करे वाले मजूरन से कहत रहा कि इत्ती कम मजूरी पै काम ना करो...मजूरी बढ़ावे का खातिर लड़ो। बेगारी ना करो...उधार पै इत्ता-इत्ता सूदो ना देव। येई सब ऊ लोगन का बुरा लगत रहा, सरकार ! (एक क्षण रुककर) अउर ठीकै है सरकार, ई सब बातन तो बरसन से चली आवत रही...।

सक्सेना : कभी मार-पीट भी हुई उन लोगों से इस बात को लेकर ? कभी कोई धमकी-वमकी दी गयी इसे कि...?

हीरा : नाही सरकार, मारपीट तो कबौ नाही भई, पर...।

सक्सेना : हाँ-हाँ बोलो, क्या किया ?

हीरा : जोरावर...धमकावत रहा कि देख रे बिसुआ...तू हमार मजूरन का हड़काईहै तो फेर जेहर भिजवाय देव। पर मार-पीट तो कबौ नाही भइल, सरकार...!

थानेदार : (जो इतनी देर से चौकन्ना होकर खड़ा है, इस वाक्य से प्रसन्न-सा हो जाता है) जी सर, कभी कोई मार-पीट नहीं हुई...उसको कभी किसी ने हाथ भी नहीं लगाया, सर !

सक्सेना : आप जरा चुप रहेंगे ? इन्हें ही बोलने दें ! (थानेदार चुप हो जाता है)

: (थोड़ा ठहरकर) आपको क्या लगता है...कैसे मौत हुई बिसू की ?

हीरा : (भर्राये गले से) हम का बतायी, सरकार...पर आपन मौत नाही मरा हमार बिसू। जरूरे कोउ मरवाइस है हमार बचवा का। (गला रुँध जाता है)

सक्सेना : किसी पर शक है तुमको ? ...(हीरा चुप। सक्सेना बढ़ावा

देते हुए) डरो नहीं, बोलो।

हीरा : हम का बतायें, सरकार...पर सारा गाँव...।

सक्सेना : बोलो-बोलो, बताओ।

हीरा : सारा गाँव जोरावर सिंह का नाम लेइ रहा, सरकार!

सक्सेना : तुम्हें भी शक है जोरावर पर?

थानेदार परेशान-सा बाहर आता है। माथे पर हाथ मारकर।

थानेदार : अरे ई हरामी तो टेप दिया रहे मालिक का नाम! (चौकीदार से) नारे लगवाओ जोर-जोर से। ई हरामी तो सबै उगलवा के रहिबे बुढ्ढ से। बुड्ढे की हिम्मत देखो...नारे, नारे... जोर-जोर से!

चौकीदार लड़कों के पास जाता है और थानेदार दौड़कर फिर अन्दर आता है। थोड़ी देर में बाहर से फिर पहले की तरह नारों की आवाज आने लगती है, पर इस बार ज्यादा जोर-जोर से। सक्सेना थानेदार की ओर देखता है।

थानेदार : (बहुत परेशानी और मजबूरी से) क्या बताऊँ सर, वो विरोधी पार्टी के लोग...कुछ सुनते ही नहीं।

सक्सेना झटके से उठते हैं और बाहर आकर एक मिनट तक देखते रहते हैं...फिर एकदम दहाड़कर।

सक्सेना : बन्द करो! (नारे बन्द हो जाते हैं। जो लड़का लीड कर रहा है उसे हाथ के इशारे से बुलाते हैं) इधर आओ। (लड़का जहाँ का तहाँ खड़ा रहता है। गरजकर) इधर आओ! (लड़का पास आकर खड़ा हो जाता है) तुम लीड कर रहे हो? इन सारे लड़कों को लेकर दफा हो जाओ यहाँ से...इसी समय... वरना लीद करने लगोगे यहाँ। समझे? (कुछ ही भुनभुनाहट-सी सुनायी देती है। वापिस पलटकर) मुँह से एक आवाज भी निकली है न किसी के तो हंटर से सुतवाकर एक-एक को भीतर करवा दूंगा। भागो यहाँ से! (लड़के लीडर सहित भाग जाते हैं। सक्सेना भीतर जाता है)

थानेदार : (चौकीदार से) बड़ी तोप चीज है ससुरी यह तो! पाँव ही काँपने लगे।

बाहर देखता है तो दूर से बिन्दा आता देता है।

थानेदार : ई का...बिन्दा तो आइ गवा, अब ई हरामी जरूरे कुछ उलटा-सीधा बकिहै।

बिन्दा, मोहन सिंह और रुक्मा आते हैं। थानेदार जल्दी से भीतर आता है। सब लोग बिन्दा के पीछे-पीछे अन्दर आने की कोशिश करते हैं।

सक्सेना : यह बाहर शोर कैसा हो रहा है ?

थानेदार : सर, वो बिन्दा आ गया...! (दरवाज़े पर ही रुक्मा को रोकते हुए)

: भीतर अकेले...ई थाना है, कोई सैरगाह नहीं। कोई सउरा भाई लिये चला आ रहा तो कोई लुगाई !

बिन्दा सुलगती आँखों से देखता है, रुक्मा उससे एकदम सट जाती है और वह आगे बढ़कर सक्सेना के सामने आ जाता है।

सक्सेना : औरत है तुम्हारी ? (रुक्मा सहमी हुई नज़र से सिर हिलाती है) आने दो। (होरा से) अच्छा बाबा, अब तुम जाओ। देखो बाबा, अपनी तरफ़ से हम पूरी कोशिश करेंगे कि मौत के असली कारण का पता लगायें।

बिन्दा एकटक सक्सेना को घूरता रहता है।

होरा : बड़ी मेहरबानी सरकार आपकी...(बिन्दा से) साहब बड़े नीक मनई, बिन्दा...हमार मदत्ति करीहै...तूओ गुस्से थूक देय !

होरा काँपता हुआ-सा जाता है। बिन्दा सहारा देकर दरवाज़े तक ले जाता है, फिर लौटकर खड़ा हो जाता है। दोनों एक-दूसरे को देखते रहते हैं।

सक्सेना : बिन्दा नाम है तुम्हारा ? (बिन्दा चुप। सक्सेना फ़ाइल देखकर) बिन्देश्वरी प्रसाद !

थानेदार : पूछिये सर इससे कि...।

सक्सेना : (थानेदार को घूरकर ऐसे देखता है कि वाक्य अधूरा ही रह जाता है) इसका बयान मैं अकेले में लूंगा। तुम बाहर जाकर बैठो।

थानेदार बिन्दा के सामने अपने को अपमानित महसूस करता है। भन्नाया हुआ बाहर जाता है।

चौकीदार : अब का हुइ गवा ?

थानेदार : मेहरारू देखी अउर लार टपकिबे लागी हरामी की। (नक़ल करते हुए) अकेले में बयान लूंगा।...मादरचोद !

सक्सेना : (कुछ देर बिन्दा के चेहरे को देखता रहता है) तुम सवेरे आये क्यों नहीं ? जानते हो, सरकारी बुलावे पर न आना जुर्म है ?

रुक्मा : (डरते-डरते) तबीयत ठीक नाहीं रही इनकी । ताप हुई गवा रहा ।

बिन्दा रुक्मा को घूरकर देखता है, वह डरकर उससे सट-सी जाती है ।

सक्सेना : देखो, डरने की कोई बात नहीं है । जो कुछ कहना है, खुलकर कहो ! (**बिन्दा चुप**) गाँव में दुश्मन था बिसू का कोई ? (**बिन्दा चुप**) तुम क्या सोचते हो इस मौत के बारे में ? (**बिन्दा चुप**) हीरा ने बहुत दबी ज़बान से बताया कि यह हत्या का मामला है ! ...तुम्हें शक है किसी पर ?

बिन्दा : (**चुभती हुई नज़रों से सक्सेना को देखने के बाद**) जो बता दें तो हिम्मत है आपमें हत्यारे पर हाथ रखने की ?

सक्सेना : (**बिना किसी आवेश के**) क्यों नहीं, इसीलिए तो मैं यहाँ आया हूँ ।

बिन्दा : आने को तो बड़ी-बड़ी हस्तियाँ आ रही हैं । सुकुल बाबूओ आये...अपना पैसा लगाके बिसू का मुकद्दमा लड़ने की खातिर । दा साहबो आये आँसू बहाते हुए मातमपुर्सी के खातिर । आज आप सबकी सतरज में बिसू की मौत का मोहरा फिट बइठ रहा है ई वास्ते इत्ता हंगामा मच रहा है...फिर से तहकीकात हो रही है...पर होना-हवाना कुच्छ नहीं । (**गुस्से से**) मैं पूछता हूँ साहेब कि कोई ईमान-धरम नहीं रह गया है आप लोगो का ?

सक्सेना : (**हलकी-सी सख्ती के साथ**) बिन्दा !

बिन्दा : अब हमारे बयान से क्या होगा ? जोरावर के कुत्ते ई थानेदार ने रपट तैयार करके तो दे दी । भरी सभा मे दा साहबो कह गये कि बिसू ने आत्महत्या की है । मसाल वालों ने छापो दिया । बस, आप लोगों के लिए तो बात खतम, फिर इस नाटकबाजी का मतलब ?

रुक्मा फसकर बिन्दा की बाँह पकड़ लेती है ।

सक्सेना : (**बिना विचलित हुए**) तो तुम क्या सोचते हो ?

बिन्दा : हम नहीं मान सकते...मरते दम तलक नहीं मान सकते कि बिन्दा आत्महत्या करेगा ।

सक्सेना : कारण ?

बिन्दा : जो जिन्दगी को इत्ता प्यार करता हो, अपनी ही नहीं, हर किसी की जिन्दगी को—वो आत्महत्या करेगा ? नहीं साहेब, नहीं, उसे मारा गया है।

रुक्मा बिन्दा की बाँह झकझोर कर जैसे उसे रोकती है।

सक्सेना : देखो बिन्दा, कहने-सुनने में ये बातें अच्छी लग सकती हैं... सुनने वालों के जज्बात भी उभार सकती हैं, लेकिन मैं एक पुलिस का आदमी हूँ। मेरे लिए इनका कोई मतलब नहीं। कानून को ठोस सबूत चाहिए।

बिन्दा : अजब है साहेब आपका ई कानून भी जो सच्चाई पे नहीं, सबूत पे चलता है और सबूत का क्या...जित्ते कहो, उत्ते बटोर दें (गुस्से से) कानून रुसाले को तो आज बाजारू औरत बना के छोड़ दिया है जिसे हर पैसे वाला जब चाहे अपने घर में बिठा ले।

सक्सेना . (सख्त आवाज में) कचहरी में खड़े होकर कानून की तौहीन करना...जानते हो, इस जुर्म के लिए तुम्हें अन्दर किया जा सकता है ?

रुक्मा बुक्का फाड़कर रो पड़ती है।

बिन्दा : (रुक्मा को फटकारते हुए) टसुए न बहा। हमरे भीतर की सुलगती आग इन टसुअन से बुझाय गयी तो हमहूँ सबकी नाईं जनखा हुइ जाब।

रुक्मा : (रोते-रोते) न बोल...न बोल।

सक्सेना : शराफ़त से पेश आओ बिन्दा, और कुछ मदद करो हमारी।

बिन्दा एकटक सक्सेना को देखता रहता है। रुक्मा उसी तरह रोती रहती है।

: तुम दोस्त हो न बिसू के तो साथ दो हमारा ! देखो, तुम्हारी औरत किस तरह परेशान हो रही है !

बिन्दा रुक्मा को देखता है फिर सक्सेना को। धीरे-धीरे उसके चेहरे का भाव बदलता है। सक्सेना इस परिवर्तन को लक्ष्य करता है।

: जिस रात बिसू की मौत हुई, उस दिन दोपहर को वो तुम्हारे घर गया था ?

बिन्दा : हाँ।

सक्सेना : कितनी देर तक रहा था ?

बिन्दा : दोपहर के खाने के बाद चला गया था।

सक्सेना : खाना उसने तुम्हारे घर खाया था ?

बिन्दा : दिन का खाना वो हमारे साथ खाता था। रुक्मा ने सौगन्ध दिला रखी थी !

सक्सेना : शादी के बाद भी बिसू को बहुत मानती थी रुक्मा ?

बिन्दा : मानेगी नही...गुरु था उसका।

सक्सेना : अच्छा, तुम्हारी और बिसू की दोस्ती तो कुल आठ महीने पुरानी थी। फिर इतनी आत्मीयता...इतनी निकटता कैसे ?

बिन्दा : महीनों से क्या होता है, साहेब ? खरा आदमी मिल जाये तो हम दुइ दिन में उसके गुलाम हो जायें। देखने को मिलता कहाँ है आज खरा आदमी ! (रुक्मा की ओर संकेत करके) ई जो औरत है न साहेब, बेहद बदजबान और बदमिजाज। कोई मरद बरदास्त नही कर सकता ऐसा औरत को ! पर हम इज्जत करते हैं, साहेब ! बाहर से भीतर तलक खरी है। बिसू की असली चेली।

सक्सेना : अच्छा यह बताओ, खाने के बाद वो कहाँ गया था ?

बिन्दा : अपने घर। सहर जाते हुए हमी छोड गये थे।

सक्सेना : तुम शहर क्यो गये थे ?

बिन्दा : मंडी में अनाज पहुँचाना था अउर कुछ सामानौ खरीदना था।

सक्सेना : अच्छा, उस दिन क्या बातें की थी उसने तुमसे ? वो दुखी या परेशान था ? किसी से कुछ कहा-सुनी या झगड़े की बात की थी उसने ?

बिन्दा : हमही से झगड़ा किया था !

सक्सेना : किस बात पर ?

बिन्दा : दिल्ली चलने की खातिर। चार-पाँच दिन पहले आगजनी के कुछ ठोस परमान जुटा लिये थे उसने। बस, तबसे पागलों की तरह पीछे पडा हुआ था—दिल्ली चलो...दिल्ली चलो।

सक्सेना : फिर ?

बिन्दा : फिर क्या, हमने कह दिया—कुछ नही होगा दिल्ली जाके भी। जब सरकार खुद सारा मामला दाब-ढाँक रही है तो हमारे-तुम्हारे करने मे क्या होगा !

सक्सेना : (उत्सुकता से) क्या प्रमाण जुटाये थे उसने ? यदि ऐसे प्रमाण हैं तो दो पुलिस को। वो नये सिरे से सारे मामले को देखेगी।

बिन्दा : (फिर गुस्सा उभर आता है) कुच्छ नहीं करेगी यहाँ की पुलिस। कोई कुच्छ नहीं करेगा।...मसाल वालों के पास गये, छापना तो दूर, बात तक नहीं की। आगजनी का कइसा च्यौरा छापा था...अब जाने कउन साँप सूंघ गया है! सब-के-सब बिक गये हैं...पुलिसो...।

रुक्मा फिर हाथ पकड़कर उसे बरजना चाहती है।

सक्सेना : कैसी बातें करते हो? बिना प्रमाण के पुलिस कर ही क्या सकती थी?...अच्छा बताओ, बिसू के मामले में तुम्हें किस पर शक है?

बिन्दा : सक! जोरावर ने मरवाया है उसे।

रुक्मा : (हाथ जोड़कर रोते-रोते) नाहीं साहेब, ई तो ऊ दिन हियाँ रहिबे नाही करे। इनका कुच्छो नाही मालूम, आप हम लोगन का छोड़ देओ, साहेब! (बिन्दा उसे धकेल देता है)

सक्सेना : लेकिन जोरावर ने क्यों मरवाया? कोई दुश्मनी थी...कोई झगड़ा?

बिन्दा : आगजनी के परमान जुटाके जोरावर की मौत का सामान जो जुटा दिया था बिसू ने।

रुक्मा : (बिन्दा के पास आकर उसे झकझोरते हुए) न बोलो...न बोलो।

बिन्दा : (फटकारते हुए) चुप कर!

सक्सेना : कोई सबूत है? कोई ऐसा प्रमाण दे सकते हो जो इस दिशा में आगे बढ़ने में हमारी मदद कर सके?

बिन्दा : क्या होगा साहेब, सबूतो देकर! बिसू के हत्यारे से तो अब हम खुदै निपट लेंगे।

सक्सेना : क़ानून को अपने हाथ में लेने की कोशिश मत करो, बिन्दा! यदि प्रमाण हैं तो हमें दो। मैं यहाँ आया किसलिए हूँ? विश्वास करो।

बिन्दा : (व्यंग्य और हिक़ारत से) बिस्वास करो! डाक्टरी रपट में निकला कि बिसू की मौत रात एक बजे के करीब हुई! जहर चार घंटे पहले पेट में गया—यानी नौ बजे के करीब। काहे नहीं जानने की कोसिस की पुलिस ने कि नौ बजे बिसू कहाँ रहा...किसके साथ रहा?

सक्सेना : (उत्सुकता से) कहाँ रहा...किसके साथ रहा?

बिन्दा : चाय की दुकान वाले पुत्तन का बयान तक नहीं लिया ई थानेदार

ने और आप कहते हैं कि बिस्वास करो !

रुक्मा : (फूट-फूटकर रोते हुए) तुम ना बोलो। नाही साहेब, ई कुच्छो नाही बोले...इनका कुच्छो नाही मालूम। (जाकर सक्सेना के पैरों में गिर जाती है) हम पर दया करो, साहेब !...आप हम लोगन के छोड़ काहे नाही देत हो, सरकार ?...इनका कउनो कछु कर-करा दिहिस तो हम कहाँ जाइब ?

रुक्मा फूट-फूटकर रोती रहती है। सक्सेना के चेहरे पर ऐसा भाव जैसे भीतर तक हिल गया हो : बिन्दा कुछ देर तक रुक्मा को देखता रहता है फिर बहुत ही ठंडे स्वर में—

बिन्दा : देख लिया, साहेब ? अइसा आतंक आपने और कही नही देखा होगा ! लोगों के घर, जमीन अउर गाय-बैलो गिरवी नही रखे हैं जोरावर और सरपंच के हियाँ, उनकी जबान अउर आवाजो बन्धक रखी है। (गुस्से से) मन करत है फावड़ा लेकर टुकड़े-टुकडे कर दें जोरावर के...फिर चाहे फांसी पर ही चढ़ जायें।

रुक्मा : ना बोल ऐसी बात...भगवान के वास्ते ना बोल।

सक्सेना : साफ-साफ बताओ...पुत्तन का हाथ है इस मामले मे ?

बिन्दा : रात नौ बजे दो लड़कों ने बिसू को पुत्तन की दुकान पर चाय पिलायी थी...अउर वो लड़के इस गाँव के नही थे। कहाँ से...!

रुक्मा : (बिन्दा को पकड़कर खींचने लगती है) तुमका मुन्ना की कसम जो अब एकौ बात मुंह से बोलो...चलो हियाँ से ! हम तुमका नाही रहे देब हियाँ...हमका जाय देओ, साहेब—हम पर दया करो ! (बिन्दा के मुंह पर हाथ रखकर उसे बाहर की तरफ़ घसीटती है)

सक्सेना : अच्छा बिन्दा, इस समय तो तुम जाओ, लेकिन इस मामले मे यदि कुछ भी मालूम पड़े तो सीधे आकर मुझे बताना। मैं देखूंगा।

बिन्दा और रुक्मा निकल जाते हैं। सक्सेना कुछ देर तक उधर ही देखता रहता है—परेशान और ग्रस्त-सा। फिर जोर से घंटी बजाता है। थानेदार आता है।

सक्सेना : सुनो, ये पुत्तन कौन है ?

थानेदार : (एक क्षण को चौंकता है, पर फिर सहज होकर) साब, वो तो चाय की दुकान करता है !

सक्सेना : कल सबेरे उसे हाजिर करना, उसका बयान लेना है।

थानेदार : लेकिन सर, वो तो चाय की दुकान...।

सक्सेना : (सख्ती से) मैंने भी यही कहा है। (एक-एक शब्द पर जोर देकर) चाय की दुकान वाला पुत्तन !

इतना कहकर सक्सेना उठ जाते हैं। अन्धकार के साथ दृश्य यहीं पर समाप्त होता है।

दृश्य : नौ

गाँव का रेस्ट-हाउस। रात का समय। रेस्ट-हाउस पर धीरे-धीरे प्रकाश आता है। सन्नाटे को चीरता हुआ दूर से कहीं चौकीदार का स्वर सुनायी देता है —"जागते रहो...जागते रहो!" एक ओर से बेतहाशा भागते हुए महेश का प्रवेश। दौड़ने के कारण उसकी साँस फूली हुई है, चेहरे पर आतंक और बदहवासी। आते ही वह जोर-जोर से दरवाजा पीटता है...सक्सेना को पुकारता है —"सर... एस०पी० साहब...मिस्टर सक्सेना...!" कभी वह खिड़की खटखटाता है तो कभी दरवाजा। टॉर्च लिये हुए मोहन सिंह दरवाजा खोलता है। पीछे-पीछे सक्सेना है।

सक्सेना : (आश्चर्य से) तुम ? इस वक़्त, यहाँ ?

महेश : सर, बिन्दा की कुछ लोगों ने पिटाई की है...जबरदस्त पिटाई!

सक्सेना : पिटाई ? किसने ?

महेश : (साँस बुरी तरह उखड़ी होने के कारण वह हाँफ-हाँफकर बोलता है) अँधेरे में रुक्मा पहचान तो नहीं पायी सर, लेकिन आज दिन में उसने जो बयान दिया था, यह उसी का नतीजा है।...हीरा काका और रुक्मा को तो मैंने साथ वाले गाँव में भिजवा दिया है, पर मेरे बहुत रोकने के बावजूद बिन्दा जख्मी हालत में भी टिटहरी गाँव के लिए निकल पड़ा है और वो जिस तेश में गया है, सर...वो उन लड़कों को जिन्दा नहीं छोड़ेगा।

सक्सेना : टिटहरी...लड़के ? कौन-से लड़के ? मोहन सिंह, पानी लाओ! (हाँफते हुए महेश को थामकर बिठाता है। मोहन सिंह पानी लाता है तो उसे पानी पिलाता है। पानी पीकर महेश संभलता है) हाँ, अब बताओ, क्या कह रहे थे तुम ?

महेश : सर, बिन्दा ने आपको बताया था न कि पुत्तन की दुकान पर दो लड़कों ने चाय पिलायी थी बिसू को। उसी चाय के साथ उसे कुछ खिलाया गया था। वो लड़के टिटहरी के हैं, जिन्हें जोरावर ने इसी काम के लिए हायर किया था।

सक्सेना : कोई प्रमाण है ?

महेश : सबसे बड़ा प्रमाण तो अचानक मिला हुआ वो पैसा है जिसकी चर्चा टिटहरी में सब कर रहे हैं। उसी से शक हुआ था बिन्दा को तो अपना एक आदमी लगा दिया उनके पीछे ! कुछ देर पहले उसी ने आकर खबर दी तो वह जरूरी हालत में ही चल पड़ा।

सक्सेना : पुत्तन गवाही देगा कि उन लड़कों ने उसकी दुकान पर बिसू को चाय पिलायी थी ?

महेश : (खीज और निराशा से) नहीं सर, पुत्तन के मुंह पर ताला डाल दिया है थानेदार ने। पर उसकी कोई जरूरत ही नहीं है सर, ये लड़के घुटे हुए अपराधी नहीं हैं, जरा-सा दबाव पड़ते ही सारी बात उगल देंगे।...लेकिन डर तो इस बात का है सर, कि तैश में आकर बिन्दा ने ही इन लड़कों का कुछ कर-करा दिया तो हमारे पास कोई मजबूत नहीं रह जायेगा।... आप तुरन्त कुछ करिये, सर !

सक्सेना : (एक क्षण महेश की ओर देखते रहते हैं) लेकिन महेश, तुम इस सब में इन्वॉल्व कैसे हो गये ? सुबह तो तुम कह रहे थे कि तुम्हें परमीशन नहीं है...फार्म में भरकर...!

महेश : (बात बीच में काटकर तैश में) इन्वॉल्व ? इन हालातों में रह सकता है कोई बिना इन्वॉल्व हुए ? (निर्णयात्मक स्वर में) अब तो मैं पूरी तरह इन्वॉल्व हूँ, सर ! देयर इज नो क्वेश्चन अबाउट इट।

महेश की बात से सक्सेना जैसे कहीं गहरे में डूब जाते हैं।

: आप जल्दी ही कुछ करिये, सर !

सक्सेना : (अपने में लौटते हुए) नाम मालूम हैं लड़कों के ?

महेश : बंसी और बिहारी ! गाँव में कोई भी बता देगा, सर !

सक्सेना फिर कुछ सोचने लगते हैं।

: (व्यग्रता के साथ) अगर ये दो लड़के नहीं पकड़े गये सर, तो फिर कभी कोई बिसू के हत्यारे को नहीं पकड़ सकेगा। और

नहीं पकड़ा गया तो सब-कुछ कितना बेकार हो जायेगा, सर ! बिन्दा का अपने को दाँव पर लगा देना...मेरा पढ़ाई छोड़ देना—सब-कुछ ! अगर बिसू को मारने वाला बच गया तो हम सब टूट जायेंगे ! (एकदम फूट पड़ता है)

सक्सेना : (कुछ क्षण सोचने के बाद निर्णयात्मक स्वर में) अब वह बच नहीं सकेगा।

महेश : (उत्साह से) सर, मैं भी चलूंगा आपके साथ !

सक्सेना : नहीं-नहीं, तुम्हारा साथ चलना ठीक नहीं है। मैं खुद देखूंगा।

महेश : लेकिन आप देर मत करिये, सर !

सक्सेना : (उसका कंधा थपथपाते हुए) तुम इस वक़्त घर जाओ...और देखो, होशियारी से जाना।

सक्सेना के व्यवहार से कृतज्ञ होकर महेश उसका हाथ पकड़ लेता है और फिर जल्दी से निकल जाता है।

: (कुछ देर उसी दिशा में देखता है) मोहन सिंह ! (भीतर से मोहन सिंह आता है) मेरा बैग लाओ।

मोहन सिंह : यस सर !

जल्दी से बैग लेकर आता है। सक्सेना बैग से काग़ज़-क़लम निकालता है...कुछ क्षण सोचता है फिर जल्दी-जल्दी कुछ लिखने बैठ जाता है।

सक्सेना : (काग़ज़ को लिफ़ाफ़े में डालकर) देखो, ड्राइवर से कहो कि यह चिट्ठी डी० आई० जी० साहब के घर जाकर देगा...खुद उनके हाथ में ! बहुत ज़रूरी है।

मोहन सिंह : (चिट्ठी लेकर) यस सर !

सक्सेना : और तुम जीप निकालो।

मोहन सिंह : (आश्चर्य से) सर ?

सक्सेना : जीप निकालो, टिटहरी चलना है, फ़ौरन !

मोहन सिंह सैल्यूट मारता है। सक्सेना भीतर जाने के लिए मुड़ता है। अन्धकार।

दृश्य : दस

दा साहब की बैठक। दा साहब चाय पी रहे हैं। पांडेजी पास में खड़े कुछ कह रहे हैं। भीतर से जमना बहन हड़बड़ाती हुई लखन के साथ आती हैं।

जमना बहन : ये मैं क्या सुन रही हूँ ! लखन का कहना है कि सुकुल बाबू की मीटिंग में एक लाख आदमी जुटेंगे। उसमें विघ्न डालने के लिए क्या कुछ भी नहीं किया जा सकता ?

पांडेजी : मैं तो कहता हूँ कि बसों और ट्रकों पर दो दिन के लिए पाबन्दी लगा दी जाये। बहुत जरूरी हो गया है।

दा साहब : (पैनी नजर से पांडे को देखते हैं) प्रजातंत्र में प्रदर्शन पर पाबन्दी लगायी जाये...अनुचित है यह !

पांडेजी : (पहली बार दा साहब की बात का प्रतिवाद करते हैं) सारा उचित-अनुचित सिर्फ हम लोगों को ही देखना है, साब ? सुनते हैं, सुकुल बाबू की जोड़-तोड़ की राजनीति तो पूरे जोर-शोर से शुरू हो गयी है। हमारे चार विधायकों ने तो गुप्त रूप से उनके लिए काम करना भी शुरू कर दिया है।

लखन : किस-किसको वश में रखेंगे, पांडेजी ? लोचन भैया के यहाँ अब रोज खुलेआम मीटिंग हो रही है। पार्टी की इमेज को लेकर उनकी नींद हराम हो रही है और जब तक वो सबकी नींद हराम नहीं कर देते, शान्ति से नहीं बैठेंगे। देखियेगा, इस रैली को ही हथियार बनाकर...।

दा साहब : (शान्त और अविचलित स्वर में) जो भी हो। अपनी लड़ाई मैं उनके हथियारों से नहीं लड़ूंगा।

पांडेजी : वो तो आपने सही फ़रमाया, साब ! लेकिन यह सक्सेना की बयानबाजी भी बहुत महँगी पड़ गयी हमको तो। बिसू के सीधे-सादे केस में जाने क्या-क्या पेच निकालकर रोज गाँव जाते रहे हैं...(खोज के साथ) भेजा था लोगों को सन्तुष्ट करने, पर सारे गाँव का वातावरण खराब करके रख दिया। (थोड़ा

पास सरककर) आप शायद जानते नहीं साब, सक्सेना की अजब साँठ-गाँठ चल रही है—बिन्दा और एक शहरी लड़का आया हुआ है वहाँ, उसके साथ। आगजनी की घटना के प्रमाण लेकर वे दोनों दिल्ली जा रहे हैं और सक्सेना हैं कि रास्ता दिखा रहे हैं उन्हें !

लखन : असली हथियार तो मिलेगा बिन्दा से। दिल्ली के अखबारों में जब प्रमाणों के साथ आगजनी की घटना छपेगी तब देखियेगा हंगामा ! बीसू की मौत को मंत्रिमंडल की मौत बनाकर ही मानेंगे लोचन भैया।

दा साहब : बिन्दा ? बहुत नाम सुनने में आ रहा है इस आदमी का।

पांडेजी : बहुत बीहड़ आदमी है, साब ! सरपंच और जोरावर कितने भड़के हुए हैं इस सबसे। सक्सेना ने कितनी सस्ती से लिये हैं इन लोगों के बयान...आप जो भी ठीक समझें करें, लेकिन अब हम कहीं के नहीं रहे। जोरावर के पैंतीस प्रतिशत वोट कम-से-कम पक्के तो थे। हरिजनों का क्या है—उन पर तो...।

दा साहब : थे ? मतलब ?

पांडेजी : अब क्या बताऊँ, साब ! जोरावर...।

दा साहब : जोरावर क्या सुकुल बाबू को वोट देगा ?

पांडेजी : नहीं साब !

दा साहब : तो ?

पांडेजी : वो खुद खड़ा हो रहा है।

दा साहब : (एकदम चौंककर) क्या ?

पांडेजी : हाँ साब, वो खुद खड़ा हो रहा है।

जमना बहन : यह तुम क्या कह रहे हो, पांडे ! जोरावर खड़ा हो रहा है ? इतनी हिम्मत कैसे हुई उसकी ?

दा साहब : कहा उसने तुमसे ?

पांडेजी : नहीं साब, और अभी कहेगा भी नहीं। बहुत उखड़ा हुआ है आजकल। कल आखिरी दिन है, कल ही अपना नामांकन-पत्र भरेगा। मुझे भी शाम को ही पता लगा।

दा साहब : (बहुत परेशानी के साथ) पर ऐसा कैसे हो सकता है—मुझे विश्वास नहीं हो रहा है।

लखन : होगा भी नहीं। 'अपने लोग, अपने लोग' कहकर और चढाइये सिर पर...'खून में वफादारी होती है इनके'—देख लो वफ़ादारी ?

पांडेजी : बात पक्की है, साब ! सुकुल बाबू ने काशी के जरिये फोड़ा है उसे। तभी तो कहता हूँ साब कि अब हमें भी...।

दा साहब : मुझसे पूछा तक नहीं और...कोई सौदा करना चाहता है क्या ?

पांडेजी : नहीं साब, इतनी पेंतरेबाजी उसके बस की नहीं। जाट आदमी है, जिधर चाहो चाबी घुमा दो। हम लोगों से नाराज था, काशी ने भड़का दिया। (दा साहब के चेहरे पर परेशानी) कहा तो है कि आपने मिलने के लिए बुलाया है। बहुत जरूरी काम है।

दा साहब : आयेगा ?

पांडेजी : हाँ साब, आता ही होगा अभी।

जमना बहन : (हलके-से क्रोध के साथ) अब जब आये तो सख्ती से पेश आना चाहिए हमें भी। भलमनसाहत की कदर जब कोई जानता ही नहीं तो क्या फायदा भलमनसाहत करने का !

पांडेजी : नहीं माताजी, इस चुनाव को जीतने के लिए तो जोरावर का साथ बहुत जरूरी है। हो सके तो आप उसे किसी तरह बस में करने की कोशिश करिये।

दा साहब : (पांडे से) पांडे, तुम्हें सरोहा की जिम्मेदारी दी है, तुम उसे ही संभालो—दूसरी चिन्ताओं से अपने को परेशान मत करो।

जोरावर का प्रवेश। तीनों उसे गुस्से से देखते हैं।

जोरावर : जै रामजी की दा साहेब ! आपने हुकुम किया था—हाजिर हो गये हम।

'जोरावर !' कहती हुई जमना बहन आगे बढ़ती हैं कि दा साहब बीच में रोक देते हैं।

दा साहब : जोरावर से मुझे अकेले में बात करनी है।

तीनों थोड़ा-सा हतप्रभ होते हैं, फिर भीतर चले जाते हैं। जोरावर भी दा साहब के इस रवैये से स्थिति को सूंघने की कोशिश करता है। दा साहब एक क्षण चुभती नजरों से जोरावर को देखते हैं। फिर उठकर घरेलू-दफ्तर वाले कमरे में आ जाते हैं। जोरावर को बैठने का इशारा करके उसी सधे हुए अन्दाज में—

: यह सही है जोरावर कि मैं जब किसी का हाथ पकड़ता हूँ तो बीच में नहीं छोड़ता। स्वभाव है मेरा। पर कोई इसे मेरी दुर्बलता समझकर नाजायज फ़ायदा उठाना चाहे तो...।

जोरावर : क्या बात है, दा साहेब ? आप साफ बोलो न ? (बैठता है)

दा साहब : साफ बात अपने लोगों के बीच हो सकती है, जोरावर ! पर तुमने तो अपनेपन की जड़ें ही काटनी शुरू कर दी हैं !

जोरावर : वो कैसे ?

दा साहब : अपने आप से पूछो यह सवाल तो ज्यादा बेहतर होगा। (विराम) क्या यह सही है कि तुम चुनाव में खड़े हो रहे हो ? (जोरावर हलके-से चौंकता है, पर बोलता नहीं) तुमने मुझसे पूछने की जरूरत तक नहीं समझी !

जोरावर : (जोरावर कुछ देर तक दा साहब को तौलती हुई नजरों से देखता है, फिर एकाएक आक्रामक रवैया अपना लेता है) देखो, दा साहेब, हमें तो दोस दो मत आप...इन बातों की पहल आपने की है।...हमारे ही गाँव में घरेलू उद्योग योजना शुरू की—एक बार पूछा तो होता हमसे भी।—सो नहीं ! पंचायत को अलग रखा उससे—पैसा भी उसके हाथ में नहीं दिया। जिन लोगों ने आपके चुनाव में खून-पसीना एक किया था, आज भरोसे के लायक नहीं रह गये ये लोग ? सोचा तो होता कि कौन-सी साख रह जायेगी गाँव में पंचायत की—हमारी ! (विराम) फिर भी हम आपके पास आये कि बैठकर बात करें आपसे...पर वो लखन बेइज्जती करता रहा हमारी आपके सामने ही और आपके मुँह से दो बोल तक नहीं फूटे हमारे वास्ते।...आपकी सह के बिना आँख मिलाकर देखे तो वो हमसे।

दा साहब : कुछ गलत तो नहीं कहा था लखन ने। फिर यह योजना सरकार की नीति है...हमारा पहला...।

जोरावर : और उस दिन गाँव में कैसा सलूक किया आपने हमारे साथ... जिन्दगी में कभी इत्ते बेइज्जत नहीं हुए हम। सबके बीच नाक कट गयी हमारी तो...आप हमें गोली मरवा देते तो हम बरदास्त कर लेते...लेकिन इस तरह नंगा करके छोड़ गये हमें आप...कित्ता तो इन्तजाम करवाया था, कैसे मन से करवाया था और आप !...हमें दुत्कार कर हीरा को लेकर मंच पर बैठ गये...।

दा साहब : सिर्फ तुमको बचाने के लिए। अपनी ज्यादतियों से जहाँ-जहाँ लोगों के मन में घाव कर रखे हैं तुमने...बहुत जरूरी हो गया है मलहम लगाना उन पर।

जोरावर : पर हमारे सीने पर जखम करने के लिए तो फिर से तहकीकात का हुकुम दे दिया आपने। आकर देखा तो होता कि कैसा सलूक किया हमारे और सरपंच काका के साथ उस दो कौड़ी के सक्सेना ने। यही इज्जत रह गयी है हमारी गाँव में कि ऐरा-गैरा हर कोई...!

दा साहब : तो अब चुनाव लडकर इज्जत बनाओगे अपनी? खेती में और राजनीति मे बहुत फ़र्क होता है, जोरावर!

जोरावर : बहुत कर ली खेती दा साहेब, अब तो हमहूँ करेंगे राजनीति।

दा साहब : किसने समझाया तुम्हें? काशी ने? सुना है, वह रास्ता भी दिखा रहा है और साथ भी दे रहा है तुम्हारा इस चुनाव मे।

जोरावर : अब आप दुरदुरा दोगे दा साहेब, तो कोई तो साथ देगा हमारा भी। कासी हमको सगे भाई से जियादह मानता है।

दा साहब : सगे भाई ने यह नही बताया कि बिसू ने आगजनी के जो प्रमाण जुटाये थे उन्हें लेकर बिन्दा दिल्ली जा रहा है— सक्सेना ने बिसू की हत्या के सारे प्रमाण जुटाकर रिपोर्ट तैयार कर दी है। अच्छा हुआ, तुमने खुद हाथ खींच लिया। मैं मुक्त हुआ। वरना इन स्थितियों में मेरे लिए भी बहुत मुश्किल हो जाता कुछ भी कर पाना।

जोरावर : क्या लिख दिया है सक्सेना ने अपनी रपट में?

दा साहब : जानते हो, किस-किस के बयान हैं इसमे! (फ़ाइल को सहलाते हुए) पढकर सुनाऊँ?

जोरावर : सक्सेना ने जिन-जिनके बयान लिये, उन सबकी राई-रत्ती खबर है हमारे पास भी।

दा साहब : पुलिस के हर काम की खबर हर किसी को होने लगे तो पुलिस ही क्या हुई?...(फ़ाइल के पन्ने पलटते हुए) रात को दो लडकों के साथ पुत्तन की दुकान पर चाय पी थी बिसू ने और यही आखिरी चीज है जो उसके पेट मे गयी।

जोरावर : (एक क्षण ऐसे देखता है जैसे तौल रहा हो) पुत्तन? लौंडे-लपाड़ो के साथ चाय-बीड़ी तो वह पीता ही रहता था, उसमें हमारा क्या है?

दा साहब : लड़के सरोहा के नहीं, टिटहरी गाँव के थे।

जोरावर : (चेहरे का रंग उड़ने लगता है) वो तो, आसपास के गाँवों में भटकता ही रहता था। काम-धाम तो कुछ था नही उस हरामी के।

दा साहब : बंसी और बिहारी नाम हैं लड़कों के। उनके बयान हैं इस फ़ाइल में !

जोरावर : (हकलाते हुए) कौन...कौन हैं ये लडके ?

दा साहब : दो घंटे की पिटाई में सब-कुछ उगल दिया है उन्होंने !

जोरावर : तो कोई भी लौंडे कुछ भी कह देंगे तो... ।

दा साहब : इस काम के लिए जो मोटी रक़म दी गयी थी...वह भी पुलिस के क़ब्ज़े मे है।

जोरावर : क्याऽऽ ! खड्डा खोदकर गाड़ नहीं दूं हरामियों को !

दा साहब : लडके पुलिस की हिरासत मे हैं। (फ़ाइल बन्द करके एक ओर रख देते हैं) समझ गये, जोरावर ? बात ज़बानी रहे तब तक कुछ नही, पर एक बार फ़ाइल में आ जाये तो बहुत मुश्किल हो जाता है।

जोरावर . (*माथे पर हाथ मारकर*) *दा साहेब...पर हमने कुछ किया भी हो...।*

दा साहब : तुम्हारी गिरफ़्तारी का वारंट निकल चुका है और तुम्हें चुनाव लड़ने की सूझ रही है ! विधानसभा की जगह मुझे तो डर है कि कही तुम्हे जेल न जाना पड़े।

दा साहब उठकर बैठक की तरफ़ जाते हैं। अपनी अचकन उतारकर पहनने लगते हैं।

जोरावर : (घबराया हुआ जोरावर दा साहब के पीछे-पीछे जाता है) यह आप क्या कह रहे हो, दा साहब...आप बात तो सुनो (दा साहब अलमारी में से कुछ निकालने लगते हैं। जोरावर वहाँ जाकर) आप तो ऐसे नाराज हो रहे हो दा साहेब, जैसे हम खड़े ही हो गये। वैसे भी आपसे पूछे बिना तो फारम भरते नही। आप कहोगे तो नही खडे होगे। रखा ही क्या इस राजनीति ससुरी में ? अपनी खेती ही भारी हो रही है हमें तो।

दा साहब : नहीं-नहीं, खड़े होना चाहते हो तो ज़रूर खड़े होओ। मैं क्यों कहूँगा कुछ ?

जोरावर : आप तो ऐसे बात कर रहे हो दा साहेब, जैसे हम आपके कुछ हैं ही नही, पराये हैं।...उस कासी ससुरे ने इत्ता भड़काया पर सुकुलवा से तो नही मिले जाकर हम। मिल ही नही सकते।...लेकिन आपने एक बार कहलवाया तो दौड़े-दौड़े हाजिर हुए या नही ? (दा साहब रैक पर से चश्मा उठाते हैं। जोरावर पीछे-पीछे) जाट आदमी हैं दा साहेब, भेजे में यों

ही थोड़ी-सी गरमी भर गयी थी। वरना आपके एक इशारे पर हमेसा खून बहाने को तैयार रहा है जोरावर और आज भी हुकुम तो करो आप। (जमना बहन अन्दर से आती हैं, पर चुपचाप दरवाजे पर ही खड़ी रहती हैं। दा साहब किसी दूसरे कोने से अपनी डायरी, पर्स आदि उठाते हैं। जोरावर पीछे-पीछे) बच्चे हैं हम आपके, दा साहेब...गलती करें तो सौ जूते मार लो...पर इस तरह। (दा साहब खूंटी पर से टोपी उतारते हैं, सिर पर लगाते हैं। जोरावर पीछे-पीछे) पिछले चुनाव में सारे वोट आपके नाम नहीं पड़े थे और इस बार भी बस इशारा भर करें...जोरावर कभी नहीं चूकेगा अपने फरज से...पर आप बात तो सुनो मेरी...!

रत्ती अन्दर आता है।

रत्ती : साब ! डी० आई० जी० साब आये हैं।

दा साहब : भेजो उन्हें ! (रत्ती जाता है) अब जो कुछ कहना हो कोर्ट में कहना।

जोरावर : (हैरान सा होकर) ये क्या हो गया ?...ठीक है, मैं यहीं बैठा रहूँगा, ले जायें मुझे यहीं से पकड़कर। (एकाएक नजर जमना बहन पर पड़ती है, लपककर उनके पास जाता है और चिरौरी करते हुए) देखो जमना बहन, उस सक्सेना ने जाने क्या उलटा-सीधा...और दा साहब हैं कि...।

जमना बहन : (फटकारते हुए) चुप रहो, भीतर चलो मेरे साथ।

जमना बहन बिना किसी तरफ़ देखे भीतर चली जाती हैं। जोरावर एक बार दा साहब की ओर देखता है, पर वहाँ सपाट चेहरा देखकर जमना बहन के पीछे-पीछे चल पड़ता है। दा साहब उसको जाते हुए देखते हैं। कुछ क्षण विचार-मग्न-से खड़े रहते हैं, फिर बैठकर सरोहा वाली फ़ाइल देखने लगते हैं। थोड़ी देर बाद सिन्हा का प्रवेश। सैल्यूट करता है।

दा साहब : (फ़ाइल देखते हुए) सक्सेना के बारे में क्या राय है ?

सिन्हा : जी, आदमी तो अच्छा है...आइ मीन...।

दा साहब : मैं अच्छे-बुरे की नहीं, योग्यता की बात कर रहा हूँ। (नजरें सिन्हा के चेहरे पर गड़ाकर, लेकिन स्वर में आवेश नहीं वही सधाव और ठहराव है) पुलिस वालों में जैसी पैनी-दृष्टि, व्यवहार-कुशलता, निष्पक्षता और टैक्ट होना चाहिए,

वैसा कुछ है नहीं। हिदायत के बावजूद दुर्व्यवहार किया है कुछ लोगों के साथ। वहाँ सन्तुष्ट करने के लिए भेजा था, बहुत असन्तुष्ट हैं लोग (सिन्हा के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगती हैं) सी० आर० भी देखी है। मेरी धारणा की पुष्टि ही करती है। जब-जब कोई महत्वपूर्ण काम सौंपा गया, परिणाम हमेशा असन्तोषजनक ही रहा।

सिन्हा : (क्षमा-याचना के स्वर में) सॉरी सर, अब मैंने केस पूरी तरह अपने हाथ मे ले लिया है। आप चिन्ता न करें। (परेशानी से) पता नही, इतने सीधे-साफ़ केस में सक्सेना ने...!

दा साहब : चुनाव के इस माहौल मे कोई भी बात इतनी सीधी और साफ़ नहीं हो सकती, मिस्टर सिन्हा! ...कितनी सफ़ाई से विरोधी पार्टी के लोगो ने हत्या की इस घटना का इस्तेमाल किया है अपने राजनैतिक स्वार्थ के लिए। वे अच्छी तरह जानते हैं कि जब तक जोरावर हमारे साथ है, एड़ी-चोटी का जोर लगाकर भी वे चुनाव नही जीत सकते। बहुत जरूरी हो गया था उनके लिए जोरावर को हटाना, और उसे हत्या के आरोप में फँसाने का इससे बेहतर मौक़ा उन्हें कहाँ मिल सकता था? पैसों के जोर से टिटहरी के उन लड़कों को खरीदकर कितनी होशियारी से जोरावर का नाम डाला गया है उनके मुँह में! (दुख के साथ-साथ पहली बार स्वर में हलका-सा क्रोध भी उभर आता है) राजनीति जहाँ इस तरह की तिड़कमबाजियो पर टिकी हो, कितना जरूरी होता है वहाँ घटनाओं की तह तक जाना!

सिन्हा : (दा साहब को आश्वस्त करते हुए) लेकिन सर, मेरी रिपोर्ट में तो यह आत्महत्या का केस है।

दा साहब : (एक क्षण सिन्हा का चेहरा देखते रहते हैं। आवाज में फिर पहले वाला सपाट आ जाता है) लगता है, निष्कर्ष आपके मन मे पहले था और रिपोर्ट बाद में तैयार की है। इसीलिए बिना सोचे-समझे सारे नतीजे उसी दिशा में निकलते चले गये।

सिन्हा : (हकबकाकर) जी...?

दा साहब : रात मैंने भी काफ़ी गौर से फ़ाइल देखी है। (क्षणिक विराम, फिर बिना किसी आवेश के एक-एक बात को समझाते हुए) बिसू और रुक्मा के सम्बन्ध बहुत साफ़ हैं...उसके बाप तक ने क़बूल किया है।...बिसू के पास बने रहने के लिए ही

रुक्मा बिन्दा को गाँव में लायी। पत्नी के प्रेमी को बरदाश्त न कर पाना, पर सन्देह न हो इसलिए मित्रता की आड़ बनाये रखना...पूरी योजना बनाकर घटना वाले दिन गाँव से अनुपस्थित रहना और बाद में आवश्यकता से अधिक आक्रामक रवैया! (एकाएक स्वर में क्रोध का पुट उभर आता है) सन्देह के लिए कोई गुंजाइश रह जाती है?...इतनी मोटी-सी बात आप लोगों की समझ में नहीं आयी? ये हत्या का मामला है...बिन्दा ने की है हत्या! और सक्सेना पुलिस का आदमी होकर मुजरिम के साथ साँग-गाँठ करे! जुर्म है यह। (गुस्से से काँपते हुए) सस्पेंड सक्सेना एंड अरेस्ट बिन्दा—इमीजिएटली!

सिन्हा हक्का-बक्का जहाँ का तहाँ खड़ा रह जाता है। दा साहब के अन्तिम शब्द के साथ ही अन्धकार हो जाता है।

दृश्य : ग्यारह

गांव में जोरावर के घर की चौपाल। तबला हारमोनियम वाले कोई बहुत ही चलती धुन बजा रहे हैं, जिस पर एक नाचने वाली नाच रही है। दो-तीन लोग मुग्ध भाव से तालियां बजा रहे हैं। एक किनारे लठैत भी बैठा है। जोरावर, पांडेजी और लखन का प्रवेश। लखन के चेहरे पर परेशानी और दुख का मिला-जुला भाव है।

पांडेजी : (नाचने वाली पर नजर डालकर) वाह जोरावर, क्या इन्तजाम किया है!

जोरावर : जोरावर की दावत में हर चीज हाजिर। (थैले में से एक बोतल निकालकर बीच में रखते हुए) यह देसी...तुम सबके लिए और (दूसरी बोतल पांडेजी को पकड़ाते हुए) यह पांडेजी के लिए।

तबलावादक : जायका बदलने के लिए बिलायती भले ही ले लो, पर भइया धक्का तो देसी का ही पड़िहै। ई बिलायती ससुरी तो बस तनिकौ गुदगुदाय भर देय। (गिलास में उँडेलकर सबको देता है)

दो-तीन लोग एक साथ : अउर का!

पांडेजी : (जोरावर को गिलास देते हुए) हिसाब से तो आज की दावत लखन की देनी चाहिए थी।

जोरावर : (लखन की ओर देखकर जो मुंह लटकाये बैठा है) लखन बाबू ठहरे सूम। कुच्छो नाही होगा इनसे। पर कोई बात नही, हम करेंगे दावत। पिलाते नहीं हो तो पियो तो सही, लखन बाबू! ई देसी नहीं, बिलायती है...अंगूरी!

लखन : (बहुत ही उखड़े स्वर में) मैं नहीं पीता, जोरावर!

आदमी 1 : दुइ दिन पहले तो बहुत चहके रहे, लखन बाबू!

गवा का ?

पांडेजी : क्यों मुंह लटका रखा है ? मातम में आये हो क्या ?

सब हँसते हैं।

जोरावर : अरे इन पांडेजी को देखो। गीता बाँचने वाले के खासुल-खास। पर इसका सौक तो फरमाते ही हैं। क्यों पांडेजी ?

पांडेजी : लत तो नहीं, पर शाम को दो पैग मिल जायें तो दिन-भर की थकान मिट जाती है और दूसरे दिन के लिए चुस्ती आ जाती है !

जोरावर : पी लो लखन, पी लो। डर-वर सब भाग जायेगा।

लखन के हाथ में जबरदस्ती गिलास थमाता है। लखन बोलता कुछ नहीं, पर चेहरे पर वितृष्णा का भाव।

पांडेजी : पीलो लखन, जोरावर इतनी खुशामद कर रहा है ! अरे, जोरावर के गाँव से चुनाव लड़ रहे हो और जोरावर की शराब नहीं पियोगे ?

सब हँसते हैं। जोरावर जबरदस्ती लखन को शराब पिला देता है। लखन बुरा-सा मुंह बनाता है। नाचने वाली अपनी गति तेज कर देती है।

: (लखन की उदासी को लक्ष्य करके) यह सच है लखन कि बिन्दा की गिरफ्तारी से हरिजनों के कुछ वोट कटेंगे। सुकुल बाबू के आदमी...।

जोरावर : मारो गोली सुकुल बाबू के आदमियों को ! सुकुल बाबू को वोट देने वाले हरिजन कौन-से हैं, हम जानते हैं, हम ! बूथ पर पहुँच तो जाये उनमें से ससुरा एक भी ! अरे जोरावर के राज में वही वोट दे सकेंगे, जिन्हें जोरावर चाहेगा।

आदमी 2 : हाँ भैया, वोट तो जोरावर के राज मा वोही दे सके है जो जोरावरजी का हुई कै रहै ! एक वो ससुरा बिन्दा, दुसमनी...।

आदमी 1 : हुई गवा भीतर।

लठैत : अउर ऊ सक्सेना, छुट्टी हुई गयी साले की !

जोरावर : देखो भइया, जो हमरे संग चले, ऊ सर माथे पर हमार। पर जो कउनो उँगली उठावे की कोसिस करै तो हाथ कटाय के धर दें ससुरे का।

आदमी 1 : अब तो सब हुड़दंगियों के हाथ कटि गये। ई खुसी में पियो।

सब पीने लगते हैं।

पांडेजी : ये जश्न जोरावर की जीत का जश्न।

तबला हारमोनियम बजने लगता है, नाचने वाली की गति तेज हो जाती है...सब लोग पीते रहते हैं। कुछ क्षणों तक जश्न का माहौल। फिर धीरे धीरे अंधकार हो जाता है।

प्रकाश डी० आई० जी० सिन्हा के घर हो रही पार्टी पर आता है। 'मशाल' का कार्यालय सिन्हा के घर में तब्दील कर दिया गया है। सजे-धजे स्त्री-पुरुष। बेयरा ट्रे में गिलास लिये घूम रहा है। सब आपस में बातें कर रहे हैं। इनकम टैक्स कमिश्नर बेदी अपनी पत्नी के साथ प्रवेश करते हैं।

बेदी : (सिन्हा से) हेल्लो माई स्वीट लिटिल रैबिट सिन्हा! कांग्रेच्-लेशंस! बड़ी रौनकें लगा रखी हैं भई! लगता है, बिना डिजर्व किये ही डी० आई० जी० से आई० जी० बन गये हो!

श्रीमती सिन्हा : कैसी बातें करते हैं, भाई साहब! यह पार्टी खाली प्रमोशन की थोड़े ही है!

बेदी : तो और क्या हो गया तुम्हारे घर? दस दिन को मैं बाहर गया और इस बीच में भाई लोगों ने पार्टी का मौका भी तलाश कर लिया!...बात क्या हो गयी?

दत्ता बाबू : अपनी क़ैद की पच्चीसवीं वर्षगांठ मना रहे है।

वर्मा : ओह, तो यह बात है! तब तो इनाम के तौर पर महीने-दो-महीने की छुट्टी दिलवा देनी चाहिए सिन्हा को इस कैद से। क्यों भाभी जी?

श्रीमती सिन्हा : कमाल करते हैं आप भी! (ठुनकते हुए) कैद तो पच्चीस साल तक मैंने काटी है। पुलिस वाले के साथ रहना किसी सजा से कम होता है?...इनाम तो मुझे मिलना चाहिए।

बेदी : ठीक है, तो इनाम के तौर पर छुट्टी आप ले लीजिए, सिन्हा को मैं अपने साथ ले जाता हूँ।

सम्मिलित ठहाका। हँसते हुए सिन्हा दूसरे लोगों के पास जाकर बात करने लगते हैं।

कोहली : मान गये, सिन्हा साब! इस बिसू वाले मामले में तो आपने कमाल ही कर दिया।

दत्ता बाबू : और नहीं तो क्या? वरना इस हत्या-आत्महत्या के चक्कर में अच्छे-अच्छे चक्कर खा गये। दोस्ती की आड़ में ऐसा

किया कि कोई पकड़ ही नहीं सकता।

कोहली : लेकिन सिन्हा साहब ने असलियत पकड़ ही ली।...बड़ी पैनी नजर है आपकी,...मान गये।

बेदी : पकडा तो इनाम भी तो मिल गया तुरन्त !

श्रीमती सिन्हा : इनाम तो सबको दिखता है भाई साहब, पर यह भी सोचा है कि जान कितनी जोखिम मे रहती है इस नौकरी में !

बेदी : (छेड़ते हुए) आपके साथ रहने से भी ज्यादा जोखिम ?

सम्मिलित ठहाका। खाने-पीने, हँसी-मजाक के बीच धीरे-धीरे अंधकार हो जाता है।

जश्न के इन दो दृश्यों की अपेक्षा बहुत मन्द प्रकाश में थाने का दृश्य उभरता है। थानेदार और चौकीदार दोनों मिलकर बिन्दा की पिटाई कर रहे हैं। हर बार बेंत खाकर वह चीखता है, लेकिन बोलता कुछ नहीं। थाने के बाहर महेश और मुअत्तिल सक्सेना खड़े हैं...परेशान, दुखी ! बिन्दा की चीखों के साथ-साथ महेश के चेहरे पर क्रोध का भाव बढ़ता जाता है।

थानेदार : कबूल कर कि बिसू को तूने मारा है (मारता है) बंसी और बिहारी को रुपये देकर तूने जहर दिलवाया...!

चौकीदार : बोल दे सूम के बच्चे...भैंचो...!

बिन्दा कुछ नहीं बोलता। उसके गले से केवल चीखने और कराहने की आवाजें आती रहती हैं।

थानेदार : नहीं बोले तो मार-मार के भैंचोद के शरीर की लुगदी बना दो !

दोनों बिन्दा पर पिल पड़ते हैं। बिन्दा की चीखों के बीच ही थाने पर प्रकाश और भी मन्द हो जाता है और दा साहब का घर पूरी तरह प्रकाशित हो जाता है। दा साहब के घर का और थाने का दृश्य साथ-साथ चलता है। दा साहब और जमना बहन प्रसन्न मुद्रा में। सामने चौकी पर प्लेटों में कई प्रकार के व्यंजन सजे हुए हैं।

दा साहब : एक घंटा मालिश करवा कर भाप-स्नान किया तो शरीर फूल-सा हलका हो गया।

जमना बहन : और क्या, तभी तो कहती हूँ कि सप्ताह मे एक बार जरूर

किया करो। पर तुम्हे फुर्सत ही कहाँ मिलती है अपने ऊपर जरा भी ध्यान देने की !

दा साहब : (सामने चौकी पर नजर डालकर) इतने व्यंजन ? दावत कर रही हो क्या ?

जमना बहन : करनी तो चाहिए दावत ! कितने संकट तो टले हैं।

थाने का दृश्य फिर सजीव हो जाता है। थानेदार का पीटना और बिन्दा का कराहना ! महेश के चेहरे पर बेचैनी और क्रोध।

प्रकाश फिर दा साहब के कमरे पर।

जमना बहन : (एक प्लेट आगे बढ़ाते हुए) लो, ये केसरिया सन्देश बनाये है। तुम्हें पसन्द है न ?

दा साहब : (मुंह में डालते हुए) तुम्हारे हाथ की बनायी तो हर चीज मुझे पसन्द है।

जमना बहन : ये मेरा नही, स्पेन की केसर का कमाल है। ऐसी महक कि तबीयत मस्त हो जाये।

प्रकाश फिर थाने के दृश्य पर।

थानेदार : (बिन्दा के दोनों हाथों को मरोड़ते हुए) हरामजादे, तेरी मस्ती तो मैं निकालूंगा ! (दर्द से बिन्दा चीख पड़ता है)

दा साहब के कमरे का दृश्य फिर सजीव।

दा साहब : (प्लेट में से एक सन्देश उठाकर जमना बहन के मुंह में देते हुए) सिर्फ़ खिलाना ही जानती हो, आज तो तुम्हें भी खाना ही पड़ेगा।

जमना बहन : (लजाकर) चलो हटो !

प्रकाश फिर थाने के दृश्य पर।

थानेदार : मार खा-खाकर भुरकस निकल गया पर बोल नहीं रहा...सूअर की औलाद...तेरी तो ! (पिटाई और चीखना)

दा साहब के कमरे का दृश्य फिर सजीव।

जमना बहन : ('मशाल' का ताजा अंक पढ़कर सुनाते हुए) बरेली उद्योग

योजना का खाका मिलते ही हरिजनों और खेत-मजदूरों में उत्साह की नयी लहर ! (बिन्दा की चीख) यदि इसी सक्रियता और कर्मठता से यह योजना चलती रही तो बहुत जल्दी ही गाँव के ग़रीब तबके की आर्थिक स्थिति में क्रान्तिकारी परिवर्तन आ जायेगा। (बिन्दा की चीख। जमना बहन अखबार एक ओर रखते हुए) जिस दिन गाँव की हालत सुधरेगी, उस दिन बापू का सपना पूरा होगा।

दा साहब : और मेरा उद्देश्य।

थाने का दृश्य फिर सजीव। चौकीदार बिन्दा के दोनों हाथ निर्ममता से मरोड़ देता है और थानेदार इतनी ज़ोर से मारता है कि बिन्दा पहली बार चीखकर बोलता है।

बिन्दा : नहीं, मैंने बिसू को नहीं मारा...।

थानेदार मारता रहता है। बिन्दा की साँस टूटने लगती है, वह ज़मीन पर गिरकर छटपटाने लगता है। चीख सुनकर महेश और अधिक अपने पर क़ाबू नहीं रख पाता और थाने के भीतर घुसने की कोशिश करता है। सक्सेना उसे रोकता है।

महेश : (सक्सेना को हटाते हुए) छोड़िये सर...मुझे अन्दर जाना ही होगा !

सक्सेना : क्या करते हो, महेश—होश में आओ ! यह कोई तरीक़ा नहीं है अपना गुस्सा दिखाने का।

महेश : आपको बिन्दा की चीखें नहीं सुनायी दे रहीं, सर ?...जो कुछ हो रहा है वह बहुत तरीक़े से हो रहा है ? यह तो सरासर जुल्म है, सर ! अब इसे और बरदाश्त नहीं किया जा सकता।

सक्सेना को धकेल कर थाने के भीतर घुस जाता है। वहाँ बिन्दा ज़मीन पर पड़ा छटपटा रहा है। एकाएक जोरावर, सिन्हा तथा दा साहब वाले रंगस्थल प्रकाशित और सजीव हो उठते हैं। जोरावर के यहाँ उसी तरह नाच-गाना चल रहा है; सिन्हा के यहाँ हँसी-मज़ाक और पीना-पिलाना चल रहा है...दा साहब के यहाँ खाना-खिलाना चल रहा है। कुछ क्षण तक महाभोज के ये दृश्य सक्रिय रहते हैं, फिर धीरे-धीरे

तीनों स्थानों पर अँधेरा हो जाता है—केवल थाने पर हलका-सा प्रकाश रह जाता है। जमीन पर पड़ा हुआ बिन्दा छटपटा रहा है, कराह रहा है। गुस्से से तमतमाया हुआ महेश थाने से बाहर आता है, एक क्षण क्रोध की उसी मुद्रा में खड़ा रहता है, फिर चेहरे का भाव बदलकर सूत्रधार के रूप में आगे बढ़ता है। हाथ उठाकर कुछ कहने के लिए मुंह खोलता है, लेकिन कुछ कह नहीं पाता मानो अब स्थिति कहने-सुनने के परे चली गयी हो। धीरे-धीरे पूरे मंच पर अन्धकार हो जाता है, लेकिन बिन्दा के कराहने की दर्द-भरी आवाज फिर भी गूंजती रहती है।

□□